# शोध सरोवर पत्रिका

आरती, वषुतक्काटु, तिरुवनन्तपुरम - 695 014, केरल राज्य।

**RNI No. KERHIN/2017/7008 ISSN No. 2456-625 X**

**वर्ष 2 अंक 6 त्रैमासिक हिन्दी शोध पत्रिका 10 अप्रैल 2018**



मुख्य संपादक

**डॉ.पी.लता**

प्रबंध संपादक

**डॉ.एस.तंकमणि अम्मा**

सह संपादक

**प्रो.सती.के**

**डॉ.एस. लीलाकुमारी अम्मा**

**श्रीमती वनजा.पी**

संपादक मंडल

**प्रो.एस.कमलम्मा**

**डॉ.जी.गीताकुमारी**

**डॉ.गिरिजा.डी**

**डॉ.बिन्दु.सी.आर**

**डॉ.षीना.यू.एस**

**डॉ.सुमा.आई**

**डॉ.एलिसबत्त जोर्ज**

**डॉ.लक्ष्मी.एस.एस**

**डॉ.धन्या.एल**

**डॉ.कमलानाथ.एन.एम**

**डॉ.अश्वती.जी.आर**

सूचना : पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार संबंधित लेखकों के हैं। उनसे संपादक तथा प्रकाशक का सहमत होना आवश्यक नहीं है।


**इस अंक में**


| | | |
|---|---|---|
| संपादकीय | | 3 |
| 'पड़ाव' उपन्यास में नारी विमर्श | डॉ.बिन्दु वेल्सर | 6 |
| वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में 'पत्ताखोर' | डॉ. लता.डी | 11 |
| हलाला धर्म की आड़ में नारी शोषण | डॉ.षेर्लिन | 14 |
| सही उत्तर चुनें | डॉ.पी.लता | 16 |
| प्रभा खेतान की कविता में नारी | डॉ.गीता.एम.ओ | 17 |
| भ्रष्टाचार में डूबा भारतीय समाजः 'सपन में गुलाब' के संदर्भ में | अंजना. डी | 21 |
| अमरकांत की कहानियों में जीवन यथार्थ | विजयलक्ष्मी.एल | 24 |
| समकालीन हिन्दी साहित्य दशा और दिशा | अजित्रा .आर .एस | 27 |
| महिला आत्मकथाएँः शोषण से लेकर शाक्तीकरण तक | अनु. बि. एस | 29 |
| हिंदी निबंध साहित्य का समकालीन परिदृश्य | महिमा.एम | 32 |
| प्रकृति की ओर एक नजर शिवानी के उपन्यासों के विशेष संदर्भ में | प्रियंका.आर | 34 |
| समकालीन दलित साहित्य की दशा और दिशा | रीष्मा. एल. एस | 36 |
| सूर्यबाला के कथासाहित्य में बदलतेनैतिक मूल्य | पंचमी.आर | 41 |
| समकालीन हिन्दी कविता और चन्द्रकांत देवताले | डॉ.पी.लता | 44 |

श्रद्धांजलियाँ - दूधनाथ सिंह(पृ.31), केदारनाथ सिहं(पृ.43), एम.सुकुमारन(पृ .49), श्रीदेवी(पृ .49) तथा गीतानंदन(पृ .50)।

# लेखकों से निवेदन

भाषा, साहित्य, समाज एवं संस्कृति पर लिखी गयी स्तरीय मैलिक तथा अप्रकाशित रचनाएँ भेजें। प्राकशनार्थ अनूदित रचनाओं के साथ मूल लेखकों से प्राप्त सहमति पत्र भी भेजें। रचनाएँ डी.वी.सुरेख ई.एन फोण्ट में वर्ड या पेजमेकर फाइल में भेजें। रचना के अंत में अपना पूरा डाक पता, मोबाइल नंबर और ई-मेल पता भी अंकित करें। संक्षिप्त जीवन-परिचय और फोटो भी भेजें।

संपादक

**डॉ.पी.लता**

शोध सरोवर पत्रिका

| | |
|---|---|
| मूल्य : | एक प्रति रु. 30/- |
| | वार्षिक शुल्क रु.120/- |

---

पत्रिका के संबंध में अधिक जानकारी केलिए संपर्क करें - डॉ.पी.लता (संपादक, शोध सरोवर पत्रिका; मंत्री, अखिल भारतीय हिन्दी अकादमी), आरती, टी.सी. 14/1592, फोरस्ट ओफीस लेन, ई-28, वषुतक्काटु, तिरुवनन्तपुरम - 695 014, केरल राज्य। फोन : 0471 - 2332468, 9946253648

ई-मेल : akhilbharatheeyhindiacademy@gmail.com

संपादकीय

# पद्म पुरस्कार

भारत सरकार ने सन् 1954 में दो उच्च 'नागरिक सम्मान' (सिविलयन अवार्ड) संस्थापित किये - 'भारत रत्न' और 'पद्म'। इनमें 'पद्म पुरस्कार' के तीन वर्ग थे - पहला वर्ग, दूसरा वर्ग और तीसरा वर्ग, जिनका 8 जनवरी 1955 को राष्ट्रपति द्वारा ज़ारी की गयी अधिसूचना के अनुसार क्रमशः पुनर्नामकरण किया गया - पद्म विभूषण, पद्म भूषण और पद्मश्री।

'भारत रत्न' भारत का सर्वोच्च नागरिक सम्मान है, जो किसी भी कार्य - क्षेत्र में सर्वोच्च स्तर के कार्य - निष्पादन या अपवाद स्वरूप उपलब्धि की मान्यता के उपलक्ष्य में प्रदान किया जाता है। 'भारत रत्न पुरस्कार' प्रदान करने केलिए राष्ट्रपति को प्रधान मंत्री द्वारा सिफारिश दी जाती है। इस पुरस्कार की संख्या प्रतिवर्ष तीन के रूप में निर्दिष्ट की गयी है।

'पद्म पुरस्कारों' की घोषणा प्रतिवर्ष गणतंत्र दिवस समारोह के अवसर पर की जाती है। कला, सामाजिक कार्य, सार्वजनिक मामले, विज्ञान, व्यापार और उद्योग, चिकित्सा, साहित्य और शिक्षा, सिविल सेवा, खेलकूद, भारतीय संस्कृति को बढ़ावा देना, मानवाधिकार का संरक्षण, वन जीव संरक्षण जैसे किसी क्षेत्र में अपवादस्वरूप विशिष्ट सेवा केलिए 'पद्म विभूषण', उच्च स्तरीय विशिष्ट सेवा केलिए 'पद्म भूषण' तथा विशिष्ट सेवा केलिए 'पद्मश्री' प्रदान किये जाते हैं। बिना किसी भेद- जैसे नसल, पेशा, पद, पुरुष जाति या स्त्री जाति आदि - के अपने क्षेत्र में स्तरीय विशिष्ट सेवा किये व्यक्ति 'पद्म पुरस्कारों' केलिए चयनित हो सकते हैं। मात्र विशेष मामलों में मरणोपरांत 'पद्म पुरस्कार' दिये जाते हैं। एक बार 'पद्म पुरस्कार' प्राप्त व्यक्ति की पाँच साल गुज़र जाने के बाद उसके भी उच्च वर्ग के 'पद्म पुरस्कार' केलिए गणना की जा सकती है। सम्मानित व्यक्तियों को सनद (प्रमाण पत्र) और बड़ा पदक दिये जाते हैं। उन्हें बड़े पदक की छोटी प्रतिकृति भी दी जाती है, जिसे वे किसी समारोह या राज्य स्तरीय कार्यक्रम में पहन सकते हैं। पुरस्कृत व्यक्तियों के नाम भारतीय राजपत्र में प्रकाशित होते हैं। प्रतिवर्ष सर्वाधिक 120 पुरस्कार ही दिये जाते हैं।

पद्म पुरस्कार चयन समिति में कैबिनट सचिव प्रधान रहते हैं और अन्य सदस्य रहते हैं - गृह मंत्रालय का सचिव, राष्ट्रपति का सचिव, अन्य चार प्रतिष्ठित व्यक्ति आदि। राष्ट्रपति भवन में आयोजित कार्यक्रम में पुरस्कार दिये जाते हैं।

'पद्म पुरस्कार, 2018' केलिए विविध राज्यों के कुल 85 व्यक्ति चुने गये हैं - 3 पद्म विभूषण, 9 पद्मभूषण और 73 पद्मश्री। इनमें आध्यात्मिकता, पारंपरिक चिकित्सा, पालिएटिव केयर चिकित्सा आदि क्षेत्रों के चार केरलीय भी शामिल हैं - श्री पी. परमेश्वरन (पद्म विभूषण), फिलिपोस मार क्रिसोस्टम (पद्मभूषण), डॉ.एम. आर. राजगोपाल (पद्मश्री), श्रीमती लक्ष्मिक्कुट्टी (पद्मश्री) आदि।

सन् 2018 में 'पद्म विभूषण' से विभूषित

श्री.पी.परमेश्वरन सन् 2014 में 'पद्मश्री' से संवारे गये थे। वे चिंतक, लेखक तथा वक्ता हैं। 91 साल के हैं। दक्षिण भारत के राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (आर.एस.एस) के वरिष्ठ पचारकों में एक हैं और सन् 1950 में प्रचार शुरू किया था। पहले राजनीति में रुचि होने के कारण जनसंघ (पूर्व) के उपाध्यक्ष और महासचिव रहे। फिर वे दार्शनिक - आध्यात्मिक कार्यों में पूर्ण रूप से तल्लीन हुए। उनके द्वारा स्थापित संस्था 'भारतीय विचार केन्द्र' एक सामाजिक तथा आध्यात्मिक अनुसंधान केन्द्र है। 'इंटरनाशनल फोरम ऑफ इंडियास हेरिटेज' के स्थापकों में एक हैं। कारल मार्क्स, विवेकानन्द तथा श्रीनारायण गुरु पर रचित पुस्तकों को भी मिलाकर पचास से अधिक पुस्तकों के प्रणेता हैं।

'पद्मभूषण' (2018) से भूषित वरिष्ठ ईसाई पुरोहित 'डॉ फिलिपोस मार क्रिसोस्टम' को केरलीय स्नेहपूर्वक 'वलिय तिरुमेनी' (अर्थात् 'वरिष्ठ पुरोहित') पुकारते हैं। आप 101 साल के हैं। मारतोमा सिरियन चर्च के महानगरीय बिशप हैं, जो अपनी मज़ेदार टिप्पणियों और दिल्लगियों से सबको प्रभावित करते हैं। पुराने अभ्यस्त पादरी हैं, जिन्होंने सन् 1944 में पौरोहित्य स्वीकार किया था। सेवानिवृत्त होते हुए भी बड़े चुस्त हैं और सामाजिक कार्यक्रमों में बड़ी तत्परता के साथ भाग लेते हैं। रेलवे में कुली (पोर्टर) बनने के संदर्भ के बारे में आत्मकथा में लिखा है। जब वे 28 साल के थे तब तमिलनाटु के जोलोरपेटी जंक्शन के एक कर्कश स्वाभाव की कुली पर उनका ध्यान गया था। उन्हें उस कुली ने यथार्थ गरीबी और दुःख अनुभव करने को अपना जैसा काम करने को चुनौती दी। यों एक महीना उन्होंने उस कुली के साथ बिताया, जो जीवन के आनंददायक कालों में से एक था।

'पद्मश्री' (2018) प्राप्त डॉ. एम.आर. राजगोपाल आखिरी हाल के बीमारों को मसीहा जैसे हैं। 70 साल के हैं। उन्होंने अपना चिकित्सा-अभ्यास मरीज़ों का दर्द-शमन करनेवाली दवा पाने केलिए सौंप दिया। उन्होंने राहत चिकित्सा को सार्वजनिक बना दिया। सन् 1995 में कोषिक्कोटु में राष्ट्र का सर्वप्रथम उपशामक देखभाल एकक (पालिएटिव केयर यूनिट) की स्थापना की। 'पालियम इंडिया' के संस्थापक और 'त्रिवेन्द्रम इंस्टिट्यूट ऑफ पालिएटिव साइन्स' के निदेशक हैं। उन्होंने चिकित्सा विज्ञान की अन्य धाराओं जैसा स्थान पालिएटिव केयर को भी दिलाने का प्रयास किया। उन्हीं के प्रयास से सख्त पीड़ा झेलनेवाले बीमारों को पीड़ाहरण - उपचार प्राप्त होने के अनुकूल एन डी पी एस अधिनियम में सन् 2014 में संशोधन लाया गया। उनके परिश्रम स्वरूप अब विविध स्थानों में सौ से अधिक पालिएटिव केयर सेंटर कार्यरत हैं।उन्हीं के प्रयास से सांत्वना चिकित्सा सन् 2008 में राज्य सरकार तथा सन् 2012 में केंद्र सरकार की स्वास्थ्य नीति का भाग बन गयी।

'पद्म पुरस्कार' जैसे उच्च पुरस्कार से सम्मानित होने केलिए विश्वविद्यालयों की पढ़ाई और उपाधियाँ ज़रूरी नहीं हैं, अपने कार्यक्षेत्र में पूरी कर्मठता के साथ विशिष्ट सेवा करना ही काफ़ी है, इसका उत्तम दृष्टांत है पारंपरिक चिकित्सा क्षेत्र की श्रीमती लक्ष्मिक्कुट्टी का सन् 2018 में पद्मश्री से सम्मानित हो जाना। आप तिरुवनन्तपुरम जिले के वितुरा नामक स्थान में कल्लार वनप्रांत के आदिवासी गाँव मोट्टमुट्ट की 75 वर्षीय महिला हैं। पिछले 50 सालों से पारंपरिक चिकित्सा का अभ्यास कर रही हैं।

परंपरागत चिकित्सा रीति को आगे बढ़नेवाली 'वन दादी' (मलयालम में 'वन मुत्तश्शी') श्रीमती लक्ष्मिक्कुट्टी वन में ताड़ के पत्ते छायी झोंपड़ी में रहती हैं। चिकित्सा - कार्यों की सुविधा केलिए इस झोंपड़ी के पास नये मकान का निर्माण कर रही हैं। जंगल में उनके निवास स्थान तक पगडंडी या सड़क का अभाव होने के कारण पहुँचाने में विलंब होने से विषाक्त मरीज़ों के मर जाने की स्थिति भी होती है। खुद लक्ष्मिक्कुट्टीजी का एक बेटा विषैला साँप डँसने से मर गया था। साँप तथा मकड़ी के काटने से अधकपारी से पीड़ित होने से कई व्यक्ति इलाज केलिए उनके पास आते हैं। वर्तमान परिष्कृत युग में पारंपरिक चिकित्सा नकारी जाती है, यह दुःख इस वन दादी के मन में है। ज़रूरतमंदों के प्राणरक्षार्थ निशब्द सेवा करते रहने पर भी उच्च नागरिक सम्मान 'पद्मश्री' प्राप्त श्रीमती लक्ष्मिक्कुट्टी आदिवासी गोत्र संस्कार और पारंपरिक चिकित्सा रीति के वैशिष्ट्य को प्रकाश में लाने में निर्णायक व्यक्तित्व बनी हैं। पारंपरिक चिकित्सा रीति तथा वनस्पति विज्ञान में रुचि रखनेवालों को इस दादी से अनमोल सेवा प्राप्त होती है। पारंपरिक चिकित्सा तथा औषधीय या रोगहर पौधों और जड़ी-बुटियों संबंधी गहरी जानकारी होने के साथ ही साथ कविता रचना करने, लोक गीत गाने और लेखों के लेखन में भी क्षमता रखनेवाली इस वनपुत्री का व्यक्तित्व सबको अनुकरणीय है। बड़ा बेटा जंगली हाथी के आक्रमण में मर गया तो उन्होंने एक हृदयविदारक कविता लिखी। जंगल का मूल्य, जंगल में निवास आदि का जैसा का तैसा चित्रणवाली 'आत्मकथा' जैसी कई टिप्पणियाँ लिखी हैं। माध्यमों में प्रसारित होनेवाले 'मन की बात' कार्यक्रम में आदरणीय प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने यों कहा है - "लक्ष्मिक्कुट्टिअम्मा की कथा चमत्कारपूर्ण है। वे अब भी कल्लार के घने जंगल में एक झोंपड़ी में रहती हैं। साँप के विष को मिश्र दवा का प्रयोग करने में वे सिद्धहस्त हैं।" वे ही पहली जनजातीय लड़की हैं, जिन्होंने अपने प्रांत से सर्वप्रथम (सन् 1950 में) स्कूल शिक्षा पायी थी। किन्तु आठवीं कक्षा के बाद उन्हें औपचारिक पढ़ाई छोड़नी पड़ी। पारंपरिक चिकित्सा विधि में आकर्षित हुई तो माता - पिता ने इस क्षेत्र में अच्छा प्रशिक्षण दिया। लक्ष्मिक्कुट्टी जी अब जड़ी-बुटियों से 500 से अधिक दवाएँ बनाना जानती हैं। उन्होंने पिछले पचास दशकों में हज़ारों मरीज़ों का उपचार किया। सन् 1995 में राज्य सरकार ने 'नाट्टुवैद्य रत्नम् अवार्ड' से सम्मानित किया तो परंपरागत चिकित्सक के रूप में उनकी ख्याति फैलने लगी। वे संप्रति चिकित्सा करने के साथ ही साथ 'कल्लार केरल फोकलोर अकादमी' में पढ़ाती हैं और प्राकृतिक चिकित्सा पर व्याख्यान देती हैं।

पद्मश्री प्राप्त लक्ष्मिक्कुट्टिजी जैसे सम्मानित होने योग्य और भी विशिष्ट व्यक्ति बिन अधिकारियों के ध्यान में पड़े अपने-अपने क्षेत्र में अति विशिष्ट सेवा करते हुए हमारे बीच रहते होंगे।

---

10 जनवरी 2018 (विश्व हिन्दी दिवस) को अखिल भारतीय हिन्दी अकादमी ने 'समकालीन हिन्दी साहित्य' विषयक जो राष्ट्रीय संगोष्ठी चलायी थी, उसमें प्रस्तुत किये गये आलेख 'शोध सरोवर पत्रिका' के इस समकालीन हिन्दी साहित्य' विशेषांक में संकलित हैं।

**डॉ.पी.लता**

**संपादक**

# 'पड़ाव' उपन्यास में नारी विमर्श

• डॉ. बिन्दु वेलसर

विश्व भर की आबादी में आधे से अधिक स्त्री है फिर भी स्त्री ही सबसे अधिक उपेक्षित और शोषित वर्ग है । समाज में स्त्री की कोई हैसियत नहीं, कोई अधिकार नहीं, वह पुरुष का उपकरण मात्र है । सब कहीं स्त्री हाशिये पर छोड़ दी गयी है । सब कहीं उसके सामने प्रतिकूलता ही प्रतिकूलता है। संविधान द्वारा उसे बराबरी का हिस्सा दिया गया है। लेकिन पुरुष वर्चस्ववादी समाज में कानून और संविधान द्वारा बनाये गए नियमों के अलावा एक सामजिक नियम कायम है, वही समाज में लागू होता है। समाज की संरचना वास्तव में मानव का अकेलापन दूर करने केलिए ही की गयी है। लेकिन वही समाज कभी कभी मानव को कितना अकेला कर देता है यह सोचने की बात है। प्रत्येक समाज की अलग पहचान होती है, उनके अपने रसम और रीति रिवाज़ें भी हाती हैं। ऐसे कुछ पहाड़ी गाँव हैं, तीस साल से ऑस्ट्रेलिया में रहनेवाली लक्ष्मी तिवारी द्वारा लिखित 'पड़ाव' उपन्यास में चित्रित, शिवपुर, नंदपुर, सिनौरी आदि। यह लक्ष्मी तिवारी का पहला उपन्यास है। यह उनका ही नहीं प्रवासी हिंदी लेखन का भी उपन्यास के क्षेत्र में पहला प्रयास है। यह उपन्यास 38 छोटे-बड़े खण्डों में विभाजित है और इसका अंतिम खंड है 'पड़ाव'। इस उपन्यास के बारे में राजेंद्र उपाध्याय ने लिखा- "यह उपन्यास समकालीन महिला उपन्यास लेखन में तो बहुत कुछ जोड़ता ही है। साथ ही प्रवासी हिंदी लेखन में भी बहुत कुछ नया कहता है। दुर्भाग्य से प्रवासी हिंदी लेखन में कविता के नाम पर तो प्रचुर साहित्य मिल जाता है, लेकिन उपन्यास जैसे गंभीर एवं श्रमसाध्य कार्य में एक बड़ी कमी यह उपन्यास दूर करता है।"[1] इस उपन्यास का प्रमुख मुद्दा है 'स्त्री विमर्श' इसके साथ ही ज़मीन हड़पनेवालों द्वारा हमारी संस्कृति पर उठायी गयी चुनौतियों और उससे उत्पन्न त्रासदियों को भी उकेरा गया है। यह उपन्यास पढ़ने से नैतिकता के नाम पर समाज में स्त्री पर हो रहे अन्यायों और अत्याचारों के प्रति पाठक के मन में एक प्रकार का आक्रोश पैदा होता है ।

पितृसत्तात्मक समाज द्वारा बनाये गए सारे नियम स्त्री को अपनी निजी संपत्ति बनाकर रखने तथा उसकी सारी स्वातंत्रता पर अंकुश लगाने के लिए थे। सिमोन द बुआ ने अपनी रचना 'स्त्री उपेक्षिता' में लिखा है कि समाज मानव मूल्य केन्द्रित नहीं, बल्कि पितृसत्तात्मक मूल्य केन्द्रित है जो स्त्री विरोधी है, इसलिए इस व्यवस्था का आमूल परिवर्तन अनिवार्य है। नारी मुक्ति आन्दोलन का जन्म पश्चिम में हुआ । इसका प्रभाव भारत में भी पड़ा। भारत में स्त्री मुक्ति आन्दोलन की शुरुआत पुरुषों द्वारा किया गया है, बाद में स्त्रियों ने उसे आगे बढ़ाया। स्त्री शिक्षा के प्रसार ने अपने पर हो रहे शोषण पर उसे सजग कर दिया

और वही स्त्री रचनाधर्मिता का मर्म है। हिंदी की समकालीन प्रमुख लेखिकाएँ प्रभा खेतान, उषा प्रियंवदा, गीतांजलि श्री, नासिरा शर्मा, चित्र मुदगल, मृदुला गर्ग, मैत्रेयी पुष्पा, कृष्ण सोबती आदि ने स्त्री के ऊपर किये जानेवाले विभिन्न अन्यायों के खिलाफ़ विद्रोह का स्वर मुखरित किया है । लक्ष्मी तिवारी के उपन्यास पड़ाव ने भी स्त्री पर होनेवाले अन्यायों पर हमारा ध्यान आकर्षित किया है। साथ ही पुरुष वर्चस्ववादी समाज द्वारा बनाये गए नियमों के कारण स्त्री को किस प्रकार विस्थापित होना पड़ता है यह दिखाने का प्रयास भी किया गया है ।

'विस्थापन' आधुनिक काल की सबसे दुखद समस्याओं में से एक है। 'विस्थापन' का अर्थ है अपने जन्म स्थान और निवास स्थान छोड़कर नए स्थान की ओर गमन करने की प्रक्रिया। 'विस्थापन' के कई कारण हो सकते हैं। नए नए देशों की खोज केलिए लोग एक देश से दूसरे देश की ओर गमन करते हैं। आर्थिक विकास केलिए भी लोग अपना देश छोड़ते हैं। अठारहवीं सदी में दास व्यापार के कारण विस्थापन की रफ्तार तेज़ हुई । उन्नीसवीं सदी में औद्योगीकरण के कारण करोड़ों लोग गाँव छोड़कर शहर में आकर बसने लगे और शहरीकरण की प्रवृत्ति बढ़ने लगी। बीसवीं सदी में आते-आते राजनीतिक कारणों से विस्थापन बढ़ गया। तेल के क्षेत्र में आयी वृद्धि के कारण खाड़ी देशों में नौकरी की तलाश में अनेक लोग प्रवासी बनकर गए। उच्च शिक्षा पाने के लिए और अच्छी नौकरी पाने केलिए दूसरे देशों में जाने की प्रवृत्ति भी बढ़ गयी। भूमंडलीकरण ने विस्थापन की प्रवृत्ति को बढ़ावा दिया। भारतीय सन्दर्भ में विस्थापन के चार मुख्य रूप हैं-

1. अंतर्राष्ट्रीय विस्थापन
2 विभाजन से उत्पन्न विस्थापन
3. विकास योजनाओं से उत्पन्न विस्थापन और
4. राजनीतिक कारणों से हुए विस्थापन

लेकिन इस उपन्यास में अभिव्यक्त विस्थापन इन सबसे अलग है। इसका कारण हमारी पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था है । सिमोन द बुआ ने कहा था कि स्त्री पैदा नहीं होती उसे बना दिया जाता है। सामाजिक व्यवस्था स्त्री को अपने नियमों में ढाल लेना चाहती है। उसकी पसंद और नापसंद का ख्याल नहीं करती । एक ज़माना ऐसा था जबकि लड़की को शिक्षा का अधिकार नहीं था। लड़का कुल पोषण केलिए है, इसलिए उसको शिक्षित करना अनिवार्य है। पर लड़की गृहस्थी संभालने केलिए है। इसलिए घर का काम-धंधा सीखना पर्याप्त है । इस भेदभाव के कारण स्त्री घर की चार दीवारी के अन्दर दम घुटकर रह रही थी। इस उपन्यास की नायिका गौतमा को उसके पिता ने शिक्षा देना चाहा। लेकिन सामाजिक नियम के अनुसार यदि ग्यारह-बारह साल के अन्दर लड़की की शादी नहीं करवायी जाती तो लड़की शादी केलिए बूढ़ी हो जायेगी। समाज द्वारा यह माना जाता है कि कन्यादान से पुण्य मिलता है। यहाँ सवाल यह उठता है कि दान किसका किया जाता है। पवन का, गगन का, सुगंध का दान हम नहीं कर सकते, क्योंकि वह हमारी अर्जित

संपत्ति नहीं है। जो हमारी अर्जित संपत्ति होती है केवल उसी का दान कर सकते है। स्त्री पहले माँ-बाप की और बाद में पति की अर्जित संपत्ति मानी जाती है। इसलिए माँ-बाप उसका दान करके पुण्य कमा सकते हैं। लेकिन बेटा किसी की भी अर्जित संपत्ति नहीं, उसका मालिक वह स्वयं है। यह भी पुरुष वर्चस्ववादी समाज की मानसिकता से उद्भूत है। 'मनुस्मृति' में कहा गया है कि जो पिता अपनी बेटी की शादी ऋतुमति होने के पहले नहीं करता वह निंदनीय है। इस निंदा से बचने केलिए पिता किसी न किसी प्रकार अपनी बेटी की शादी करने केलिए विवश हो जाता है। बाल विवाह का प्रारंभ भी शायद इसी विचार से होने की संभावना है।

गौतमा का पिता अपनी बेटी को शिक्षित करना चाहता है । उनका कहना है "मुझे उसके विकास की चिंता है, विवाह की नहीं"।[2] इसलिए उन्होंने उसे आठवीं तक पढ़ाया। लेकिन गौतमा की माँ हर समय बेटी की शादी को लेकर चिंतित रहती थी और पिता को भी बेचैन करती रहती थी। अंत में विवश होकर पिता बेटी की शादी कराने केलिए तैयार हो जाता है। इस विवशता का कारण कुछ और नहीं सामाजिक डर है। यहाँ स्पष्ट है कि आदमी वर्तमान सामाजिक व्यवस्था से डरते हैं। इस व्यवस्था को बदलने की इच्छा क्यों न हो पर अपने निजी मामले में आकर वे इस व्यवस्था के अधीन बन जाते हैं। वह अपनी बेटी का विवाह पढ़ा-लिखा अठारह साल के लड़के के साथ करवाना चाहता था। लेकिन ऐसा लड़का मिलना मुश्किल था, क्योंकि उस समाज में लड़के की शादी की उम्र बाईस साल के ऊपर थी। भवानी शंकर के पिता कहते हैं "पति और पत्नी के मध्य दस से बारह वर्ष का अंतर आवश्यक है। तभी तो बुढ़ापे में मर्द की सेवा कर पायेगी वह ।"[2] माने स्त्री का कर्त्तव्य है परिवार में अपने पति, सास, ससुर, संतान सभी की सेवा करना। समाज द्वारा ऐसी नारी को आदर्श नारी का ओहदा दिया जाता है।

गौतमा की शादी उसके माँ-बाप ने मज़बूर होकर बिना ससुराल को देखे-परखे तय कर दी। बाद में पश्चताते भी हैं। रेवती कहती है, "ऐसा लग रहा है कि बेटी के साथ हमने घोर अन्याय कर दिया है, .....? मेरी बुद्धि को न जाने कहाँ का प्रेत चुरा ले गया था .....।" "सही कहा तुमने रेवती, वह प्रेत ही था, हमारे रिवाज़ों और रूढ़िवादिता का प्रेत। तुम डर गयी उससे, और तुम ही क्यों, डर तो मैं भी गया। ..... मैं अपनी बेटी को पढ़ा-लिखाकर किसी ज़िम्मेदार व्यक्ति के हाथों सौंपना चाहता था। और हुआ क्या? यदि मोधुली की बात सत्य निकली तो? हे प्रभु, न जाने क्या होगा? हम जैसे माँ-बाप से कष्टों के सिवा क्या मिलेगा हमारी बटी को ?"[3] समाज के डर से मज़बूर होकर बेटी की शादी करवाई। आगे बेटी को एसी सलाह भी दी- "बेटी यह विवाह तुम्हारे मन का नहीं, जानता हूँ। सच कहूँ तो मेरे भी मन का नहीं है, पर नियति के खेल में हम मनुष्यों की कहाँ चलती है ?..... जिस घर में जा रही हो उस घर की दहलीज़ का मान रखना। मैं तुम्हें ये सब इसलिए कह रहा हूँ बेटी, कि इस समाज में औरतों के लिए अपवाद बनकर रहना अत्यंत कठिन है।"[4]

पति के घर में गौतमा को केवल तिरस्कार ही मिलता है। गौतमा पढ़ी-लिखी है। इसलिए पुरुषोत्तम के दोस्त उसका मज़ाक उठाते हैं कि "सभी कह रहे हैं कि ऐसी बहू हमारी समौरी में तो क्या, पूरे कुमायूं में नहीं मिल सकती। उस पर सुना है, भौजी पढ़ी-लिखी भी है ।"..... "भौजी अगर अपने यार-दोस्त को चिट्ठी भी लिखेगी तो तुम्हें तो पता लगने से रहा।क्योंकि तुम्हारे लिए तो काला अक्षर भैंस बराबर ठहरा, है कि नहीं ?"[5] उन दोनों की बातों ने पुरुषोत्तम के अहंकार को उस दिन जो ठेस पहुंचाई थी, गौतमा उसकी भरपाई कभी कर ही न पायी। सुहाग रात में गौतमा ने पुरुषोत्तम की आँखों में ऐसी चमक देखी थी जैसे शिकार को ताकती हुई लोमड़ी की आँखों में होती है। ससुराल में उसे केवल तिरस्कार और निंदा ही मिलती है। इसलिए विवश होकर गौतमा खुदखुशी करने जाती है। लेकिन भवानीशंकर उसे बचाता है और उसकी प्रेरणा से गौतमा उसके साथ भाग जाती है और भवानी शंकर के साथ खुशी का जीवन बिताती है। भवानी शंकर की मृत्यु के बाद गौतमा अपने छोटे बेटे के साथ अपने घर लौटती है। लेकिन उसके माँ-बाप और भवानी शंकर के पिता उसे स्वीकार करने केलिए तैयार नहीं हाते। पराये पुरुष के साथ भागी हुई औरत घर केलिए और समाज के लिए कलंक मानी जाती है। इसलिए परिवार का मान बचाने केलिए उसे गाँव से प्रस्थान करना पड़ता है। हम एक ऐसे समाज में जी रहे हैं जहाँ परिवार का मान-सम्मान भी सिर्फ स्त्री के चरित्र पर आधारित है। यदि किसी स्त्री को अपने पति के घर में तिरस्कृत और अपमानित होकर दम घुटकर जीने की नौबत आती है तो उसके सामने बस एक ही रास्ता है, खुदखुशी करना। उसके घरवाले इस दुःख में दुखी होकर जियेंगे। उसे आदर्श गृहणी का नाम देकर स्त्री जाति को अधिक शोषण का लायक बना देता है यह समाज। लेकिन यदि वह किसी ऐसे पुरुष के साथ खुशी का जीवन बिताने केलिए तैयार हो जायेंगी जो उससे प्रेम करता है तो समाज कुलटा का विशेषण देकर उसे घर से निकाल देता है। कुछ पुरुष ऐसे भी होते हैं जो छुपके से उसकी मदद करने के बहाने उसका शोषण करते हैं। यदि स्त्री तैयार नहीं होती तो उस पर झूठा आरोप लगाते हैं। यही हमारी समाजिक व्यवस्था है। हमारा समाज उसे घर की चार दीवारों के भीतर बंदी बनाकर रखने में आनंद का अनुभव करता है।

ऐसा माना जाता है कि 'परिवार' सुरक्षा का प्रतीक है। लेकिन सच्चाई यह नहीं है। अक्सर यह देखा जाता है 'परिवार' नारी को सुरक्षा प्रदान नहीं करता, बल्कि उसे बहुत असुरक्षित और शोषित बना छोड़ता है। गौतमा को अपने परिवार से कभी सुरक्षा नहीं मिली। पहले, पिता ने उसकी शादी करके घर से निकाल दिया। पर पुरुष के साथ भाग जाने के कारण बाद में विधवा और अकेली गौतमा को उसके पिता घर में रहने की अनुमति नहीं देते है। सबके होते हुए भी गौतमा को असुरक्षा की ज़िन्दगी जीनी पड़ती है। गौतमा सुन्दर है, युवती है, विधवा है, बेसहारा है। इसलिए इसका फायदा उठाने के लिए ठेकेदार जैसे कई लोग सामने आ जाते हैं। ऐसे लोगों से बचने केलिए वह मास्टरजी के साथ उनकी पत्नी बनकर

रहने केलिए मज़बूर हो जाती है। लेकिन गौतमा कभी भी गौतमा बनकर जी नहीं पाती। एक बार उसके पिताजी उससे मिलने आते हैं तो एक दूर का रिश्तेदार कहकर उनका परिचय करवाना पड़ता है। इस प्रकार वह अपनी निजता और अस्मिता को छिपाकर जीने केलिए मज़बूर हो जाती है। ऐसा क्यों है कि समाज में स्त्री केलिए एक नियम और पुरुष केलिए अलग। गौतमा और उसके पति पुरुषोतम दोनों ने एकाधिक शादियाँ की हैं। लेकिन गौतमा को ही विस्थापित होने की नौबत आ जाती है। पुरुषोत्तम अपने गाँव में अपनी तीसरी पत्नी के साथ खुशी का जीवन बिता रहा है। पुरुषोत्तम की तुलना में गौतमा सुन्दर है, पढ़ी-लिखी है, सुशील है, धनी है, ऊँचे कुल की है, साहसी भी है। फिर भी समाज में उसका कोई अस्तित्व नहीं।

इस उपन्यास की एक अन्य पात्र अंबुजा भी विस्थापन का जीवन जी रही है। वह बाल विधवा थी, शादी के दो दिन बाद उसके पति की मृत्यु हो जाती है। किसी दुसरे के प्रेम से वह गर्भवती हो जाती है और वह पुरुष उससे शादी करने केलिए इनकार करता है। क्योंकि बिना शादी के गर्भवती बनी नारी कुलटा, आवारा और बदचलन होती है। उससे शादी कौन करेगा? इसलिए उसका प्रेमी दूसरी शादी केलिए तैयार हो जाता है। अंबुजा उसे मारकर वहां से भाग जाती है और अपनी पहचान छिपाकर गौतमा के साथ रहने लगती है।

इस उपन्यास का प्रकाशन सन 2017 में हुआ था। फिर भी इसमें अभिव्यक्त आधिकांश समस्याएँ आज के परिप्रेक्ष्य में खरा नहीं उतरतीं, बल्कि स्वाधीनता के समय के भारत की समस्याएँ हैं। आज के इस सूचना प्रद्योगिकी के युग में नारी जीवन में क्रान्तिकारी परिवर्तन आ गया है। नारी आज शिक्षित हो गई है और समाज के सभी क्षत्रों में उसने अपना हस्ताक्षर बना पाया है। फिर भी समकालीन समाज में ऐसे कई नियम हैं जो स्त्री-विरोधी हैं। लेकिन आज भी ऐसे कई गाँव हैं, जो बहुत पिछड़े हुए हैं, जहाँ नारी का शोषण हो रहा है। इस दृष्टि से इस उपन्यास में कुछ ताज़गी है।

## संदर्भ


1. 'पड़ाव' उपन्यास का फ्लाप, 2017, प्रकाशक: वाणी प्रकाशन, दिल्ली।
2. पड़ाव, पृ. सं. 29
3. पड़ाव, पृ. सं. 53
4. पड़ाव, पृ. सं. 66
5. पड़ाव, पृ. सं. 82



♦ डॉ. बिन्दु वेलसर
असिस्टेंट प्रोफसरे
सरकारी महिला महविधालय
तिरुवनंतपुरप, केरल -
फोन. :9495746923

# वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में 'पत्ताखोर'

• डॉ. लता.डी

'वैश्वीकरण' या 'ग्लोब्लाइज़ेशन' एक ऐसी अवधारणा है जो राष्ट्रों के बीच की सभी प्रकार की दूरियों को समाप्त करके सर्वराष्ट्र समता की भावना लेकर आयी थी। इसका सीधा संबन्ध व्यापार और बाज़ार से है, क्योंकि यह विश्व के सारे स्थानीय, क्षेत्रीय तथा राष्ट्रीय संसाधनों को विश्व बाज़ार सो जोड़ता है। इसके पुरोधा अमरीका होने के कारण इसे अमरिकीकरण या पश्चिमीकरण भी कहते है। नव साम्राज्यवाद, नव उपनिवेशवाद, सांस्कृतिक साम्राज्यवाद जैसी संज्ञाओं से भी यह अभिहित है। समानांतर अगला शब्द है 'भूमंडलीकरण'।

बीसवीं शती के अतरार्द्ध तक आते-आते 'वैश्वीकरण' के नाम पर अन्य विकासशील राष्ट्रों की तरह भारत में भी आर्थिक उदारीकरण और निजीकरण की प्रक्रियाएँ तेज़ी से लागू होने लगीं। अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष, विश्व बैंक, विश्व व्यापार संगठन जैसी संस्थाओं का अविर्भाव हुआ। साथ ही साथ 'गाट' (GAAT) जैसे अन्तर्राष्ट्रीय समझौतों के ज़रिये राष्ट्रों के बीच मुक्त व्यापार को भी बढ़ावा मिला। विश्व बाज़ार, उपभोक्तावाद, सूचना प्रौघोगिकी, मीडिया, विज्ञापन आदि के माया स्वरूप की पकड़ से भारतीय जन जीवन भी मुक्त न हो सका।

संयुक्त राष्ट्र संघ के ESCWA (Economic and Social commission for Western Asia) ने 'वैश्वीकरण' के बारे में कहा है कि "It refers to the reduction and removal of barriers between national borders in order to facilitate the flow of goods, capital, services and labour....."

यघपि 'वैश्वीकरण' का सीधा संबन्ध वाणिज्य व व्यापार से है फिर भी भारतीय संस्कृति, कला, साहित्य, वेशभूषा, खान-पान, नैतिक मूल्य, मानवीय संबन्ध सब पर इसका प्रभाव पड़ा। भारत की कृषिप्रधान संस्कृति, कुटीर उघोग, क्षेत्रीय भाषाएँ, सांस्कृतिक कार्य-कलाप, हमारा बचपन, युवा जीवन, बुढ़ापा सब कुछ तिरस्कृत या हेय समझे जा रहे हैं। यहाँ भी

भुखमरी, कृषक आत्महत्याएँ, ी जैसी अवांछनीय एवं नकारात्मक ाला हो रहा है। हमारे प्राकृतिक से लेकर पेय जल तक लूटे जा

'वैश्वीकरण' का सबसे बड़ा दुष्प्रभाव पड़ा है हमारे परिवार और पारिवारिक संबन्धों पर। आज के आत्मकेन्द्रित व्यक्ति अपने खरीदने की क्षमता को ही बड़ा महत्व देता है। उसके जीवन पर बाज़ार का ही वर्चस्व है। जितना खरीदकर वह अपने मकान को भरा पूरा बनाता हे उतनी ही उसमें शून्यता भरती है। जीवन की सहजता और स्वाभाविकता को कृत्रिमता और दिखावे ने हड़प लिया है। सुदूर देशों के बीच की दूरियाँ तो मिट गयीं। लेकिन एक ही परिवार में

रहनेबालों के बीच की मानसिक दूरियाँ ता बढ़ती जा रही हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हुए क्रय-विक्रय में सबसे खतरनाक था नशीले पदार्थों का व्यापार। पाकिस्तान, अफगानिस्तान, बर्मा, ईरान, ताइलन्ड जैसे देशों से बड़ी मात्रा में भारत में आनेवाले ब्राउन शुगर, हेरोइन जैसी चीज़ें तो सभी भारतीय शहरों से लेकर गाँवों तक मिलती हैं। कोलकता, मुंबाई जैसे महानगरों में इसका उपयोग सबसे अधिक होता है। नशे की एक छोटी-सी पुड़िया को कोलकता में 'पात्ता' कहा जाता है और नशेबाज़ को 'पत्ताखोर' कहते है। :

सामाजिक प्रतिबद्ध हिन्दी कथाकार श्रीमती मधु कांकरिया का 'पत्ताखोर' नामक उपन्यास कोलकत्ता नगर की पृष्ठभूमि पर रचित है। इस उपन्यास का पत्ताखोर है आदित्य, जो एक मध्यवर्गीय माँ-बाप का इकलौता पुत्र है। कामकाजी मा-बाप के बीच किसी न किसी बात पर हर रात झगड़ा होता है। आदित्य केलिए घर कुरुक्षेत्र था। पिता हेमंतबाबु तो एकदम संत स्वभाववाला एवं संवेदनशील है। सदा पुस्तकों में मग्न रहनेवाला भलामानस। लेकिन माँ वनश्री प्राइवट बैंक की कैशियर है, जो नौकरी को ही जीवन का सबसे बड़ा लक्ष्य मानकर अपनी मूलभूत ज़िम्मेदारियों की अवहेलना करती है। वह तो पूर्णतः आत्मकेन्द्रित तथा बुद्धि एवं व्यवहार की दुनिया में रहनेवाली है। अपने व्यक्तित्व और स्वतंत्रता को महत्व देनेवाली वनश्री सदा व्यस्त एवं पति व बेटे की शिकायत करनेवाली है। बेटे के भविष्य की चिंता तो वह करती है, लेकिन बेटे से स्नेहपूर्ण बातचीत केलिए उसे फुरसत नहीं। भारतीय से ज़्यादा वह पाश्चात्य दृष्टिकोण रखनेवाली है। फलतः बेटा आदित्य माँ के प्यार से वंचित हो जाता है। कलाकार-आत्मा रखनेवाला आदित्य स्कूल से लौटकर फ्लाट के अन्धेरे कमरे में किताबों के दमघोंटू वातावरण में रहता है। वह तो सदा उदास और बेचैन है। उसके अनुसार पापा नरम है तो माँ एकदम गरम है। घर में झगड़े ज़ोरों पर होने पर वह स्टोर रूम की टंकी के पीछे छिपा रहता है। उसकेलिए दादी माँ एक सेफ्टी वाल्व है जो माँ के प्रचण्ड गुस्से से उसकी रक्षा करती है। दादी माँ की मृत्यु से उसके जीवन का आखिरी पुल भी टूट जाता है।

वनश्री केलिए आदित्य एक प्रोब्लम चाइल्ट है। वास्तव में वह एक गायक बनना चाहता है। लेकिन मज़बूरी से शास्त्र पढ़ता है। समय से पूर्व ही वह परिपक्व एवं संवेदनशील है। वह तो आधुनिकता तथा प्रगति का विरोधी है। वह पुरानी दुनिया में लौट जाना चाहता है जहाँ बच्चों के साथ उनके भाई-बहन हों, मित्र हों और जहाँ वे इतमीनान से जी सकें।

घर के तनावग्रस्त जीवन से बचने केलिए वह अक्सर बाहर घूमने जाता है और एक दिन एक मित्र के द्वारा गांजे के सिगरेट का मज़ा लेता है। बाद में पढ़ाई की असफलता का सामना न कर सकने पर वह उच्च स्तरीय जानलेवा और खतरनाक नशे की दुनिया में प्रवेश करता है। पिता ने 'live a pure life' का जो उपदेश दिया था उसे भूलकर वह घर छोड़ जाता है और अपनी मर्ज़ी से जीता है। अंत में नशे का शिकार हो जाता है। पिता अपनी सारी कमाई खर्च करके उसे एक रिहाबिलिटेशन सेन्टर में उसका इलाज करवाके पुनः ज़िन्दगी में लाता है। वनश्री भी पश्चाताप से नौकरी छोड़कर हमेशा लड़के के साथ रहती है और घर का वातावरण खुशी से भर जाता है। फिर भी नशे के प्रति अदम्य लालसा उसके दिल की तहाई में रहती है। बाद में कॉलेज की पढ़ाई के बीच आये असफल प्रेम के सन्दर्भ में वह

फिर नशे के गड्ढे में पड़ जाता है और घर छोड़कर कोलकत्ता की गलियों में आवारा फिरता है।

वस्तुतः वैश्वीकृत समय और समाज जिन आपत्तियों से गुज़र रहे हैं उनका उल्लेख उपन्यास में है। एक व्यक्ति के व्यक्तित्व के संपूर्ण विकास का आधार है उसका बचपन। बचपन केलिए परिवार, उसका वातावरण और माँ का प्यार अहम महत्व रखते हैं। सुख-सुविधाओं केलिए वर्तमान मानव में जो आसक्ति है, वह वनश्री में स्पष्ट है। बिगड़ी हुई पारिवारिक स्थितियाँ आदित्य को पत्ताखोर बनाती हैं। उपन्यास में हेमंतबाबु वनश्री से पूछता है- "आजकल की औरतें भी अजीब ढंग से कन्फ्यूज़्ड हैं। आर्थिक कारणों के तर्क, माँ की भूमिका और उसकी आवश्यकता को नकार नहीं सकते। कम सुविधाओं के साथ रहा जा सकता है, पर माँ के बिना नहीं। रही बात महँगाई की तो आज हमारे पास उस समय से कहीं ज़्यादा समृद्धि है। ये टी.वी., फोन, मिक्सी, सोफा.... पहले कहाँ था यह सब? हम खिचड़ी के सहारे जी रहे थे, पर खुश थे। तुम हमेशा खर्च का रोना रोकर चन्द रुपयों केलिए नैकरी करती रही हो और पुत्र की शाप चीखों में बदलती रही है।" [1] फलस्वरूप नशे में शरण लेनेवालों के जीवन की यथार्थता का उल्लेख भी लेखिका करती हैं कि " नशे की खुराक केलिए नशेबाज़ कुछ भी कर सकता है...डकैती, चोरी , ताला ताड़ना...वह भूखे जानवर की तरह खूँखार हो जाता है। वह अपने ही बच्चे के दूध का डब्बा बेच सकता है। रोगी की दवाइयाँ बेच सकता है...।"

अंत में ऐसे लोग कोलकत्ता,मुंबाई जैसे महानगरों की गंदी सड़ी गलियों का हिस्सा बन जाते हैं। आदित्य भी ऐसी एक गली में शरण लेता है, जहाँ सुदूर गाँवों से भी किसान आकर मज़दूरों में तब्दील होते हैं और रिक्शा चलाकर जीवन यापन करते हैं। मिट्टी, लोहे और अन्य परंपरागत कुटीर उद्योग करनेवालों के दयनीय जीवन, भूख, बीमारी, मृत्यु, दुख आदि से आदित्य का मन हिल जाता है। वह स्वयं नशे की दुनिया से बाहर आ जाता है और वहाँ के बच्चों को शिक्षा की दुनिया में लाकर, वहाँ के भिंखमंगों, मज़दूरों, रिक्शावालों सबको अपने अधिकारों केलिए लड़ने में मदद देकर वह अपने जीवन को सफल और सार्थक बनाता है। उसको पता चलता है कि जीवन जब वैभव संपन्न रहता है या जब केवल अपनेलिए जिया जाता है तभी बोरडम या ऊब की स्थिति रहती है जिससे बचने केलिए उसे नशे में शरण लेना पड़ा था। अभावों की दुनिया में छोटी-छोटी खुशियों की भी बड़ी कीमत होती है। जीवन का असली अर्थ समझनेवाले उन बस्तीवालों केलिए आदित्य अपने को समर्पित करता है। अंत में वह माँ से कहता है कि "यहाँ ज़िन्दगियाँ एक दूसरे से जुड़ी हुई हैं। माँ, जो सबको अपना ले वही शिव है, बाकी सब शव है।"[2]

## संदर्भ


1. 'पत्ताखोर', मधु कांकरिया, पृ. सं. 20, प्रकाशकः राजकमल प्रकाशन।

2. पत्ताखोर, मधु कांकरिया, पृ. सं. 204



◆ असिस्टेंट प्रोफसरे
सरकारी महिला महविधालय
तिरुवनंतपुरप, केरल -
फोन: 9497428960

# हलाला धर्म की आड़ में नारी शोषण

• डॉ.षेर्लिन

'हलाला' भगवानदास मोरवाल द्वारा मुस्लिम परिवेश पर लिखा गया एक बहुचर्चित उपन्यास है । इस उपन्यास की कथा की पृष्ठभूमि हरियाणा का मेवात जिला है। इस उपन्यास में धर्म की आड़ में नारी शोषण और साथ ही साथ मुस्लिम स्त्री की चेतना का भी बड़ी खूबी से चित्रण किया गया है ।

इस्लामी पारिभाषिक शब्दों में 'हलाल' और 'हलाला' ऐसे दो शब्द हैं जिनका कुरान और हदीसों में कई जगह प्रयोग किया गया है । दिखने में ये दोनों शब्द एक जैसे लगते है, लेकिन अर्थ में बिलकुल विपरीत। जब मुसलमान किसी जानवर के गले पर अल्लाह के नाम पर छुरी चलाकर मार डालते है तो इसे 'हलाल करना' कहते हैं । अर्थात् 'हलाल' का अर्थ 'अवर्जित' है। लेकिन 'हलाला' के बारे में बहुत कम लोग ही जानते हैं, क्योंकि इस शब्द का सम्बंध मुसलमानों के वैवाहिक जीवन और कुरान के महिला विरोधी कानून से है 'हलाला' मुस्लिम समाज की एक ऐसी प्रथा है जिसमें एक तलाकशुदा पत्नी को अपने पति से दोबारा निकाह करने के लिए उसे पहले किसी दूसरे मर्द से निकाह करना पड़ता है यही नहीं उसके साथ हमबिस्तर भी जरूरी है ।

उपन्यासकार भगवानदास मोरवाल ने इसी मुद्दे को अपना विषय बनाकर 'हलाला' उपन्यास की रचना की। धर्म की आड़ में स्त्री को इतना परेशान किया जाता है कि वह जानवरों से भी बेहत्तर जिन्दगी जीने को मज़बूर हो जाती है । दरअसल 'हलाला' धर्म के नाम पर बनाया गया एक ऐसा कानून है, जिसमें स्त्री को भोग्य वस्तु बना दिया गया है । सच तो यह है कि हलाल मर्द को सजा देने के नाम पर गढ़ा गया षड्यन्त्र है जिसका फल औरतों को ही भुगतना पड़ता है । सच पूछा जाय तो हलाल का उद्देश्य पति-पत्नी में सुलह करना नहीं बल्कि तलाक के बहाने मुस्लिम औरत को वेश्यावृत्ति की ओर ढकेल देना है ।

'नजराना' इस उपन्यास की प्रधान कथापात्र है उसका शौहर है नियाज, जो बिना किसी जायज वजह के उसे तलाक दे देता है लेकिन बाद में उसे पश्चाताप होता है। वह अपनी पत्नी को अपनाना चाहता है। लेकिन इसके लिए शरियत कानून की शर्त पूरी करनी पड़ती है जिसे हलाला कहा जाता है । हलाला नामक धार्मिक संकट से बचने के लिए उसकी सास-ससुर कल्लो और टटलू डमरू के घर जाकर डमरू की भाभी नसीबन से मिन्नते करते हैं। अंत में डमरू और उसके परिवारवाले मान लेते हैं। नजराना की शादी डमरू से करा दी जाती है जो छलकपट जैसे भावना से दूर रहता है। शादी के बाद तलाक देने का अवसर जब आता है तब मौलवी साहब डमरू से पूछता है - "एक मिनिट मिया तलाक तो दे रहे हो मगर यह बताओ कि हलाला भी हुआ या नहीं ।"[1] मौलवी साहब डमरू और वहाँ

इकट्ठे हुए लोगों को शरियत के मुताबिक हलाला कैसे होता है यह सविस्तार बताते हैं - "जी शरीयत के मुताबिक हलाला यह नहीं होता कि खाली निकाह कराकर फिर से तलाक दिलवा दो... यह तो अल्लाह पाक कि निगाह में एक और गुनाह हो गया ...ऐसे तो आप राज़ाना तलाक दो और राज़ाना हलाला कराओ... हलाला के लिए सिर्फ दूसरा निकाह काफी नहीं है, बल्कि उस वक्त तक औरत पहले शौहर के लिए हलाला नहीं हो सकती ,जब तक कि वह दूसरे शौहर के साथ हमबिस्तर न हो ले।"[2]

नजराना अपने बच्चों के पास पहुँचने के मोहवश खुद न चाहते हुए भी हमबिस्तर होने को राज़ी हो जाती है। लेकिन भोला डमरू इसके लिए तैयार नहीं होता। पर जरूर कहता है कि पंचों के सामने हलाला की शर्त पूरी होने की बात स्वीकार कर लेगा। लेकिन पंचायत में जब डमरू हलाला की शर्त पूरी होने की बात स्वीकार कर तलाक देने ही वाला था तब नजराना बीच में बोल पड़ती है कि शर्त पूरी नहीं हुई ।–"हम लत्ता - कपड़ा है कि जब जी करे पहर लेओ और जब जी करे उन्ने उतार के फैंक देओ?"[3]

नजराना पुरुषवादी सत्ता से कई तीखे सवाल भी पूछती है और उसके ज़्यादतियों को न सहन करने की घोषणा करती है । भगवानदास मोरवाल ने अपने इस उपन्यास में मुस्लिम स्त्रियों का मुस्लिम समाज द्वारा हुए शोषण को उन तमाम बारीकियों को उजागर किया है जिससे स्वयं मुस्लिम स्त्रियाँ भी अपरिचित है ।

भगवानदास मोरवाल ने 'हलाला' उपन्यास में मुस्लिम स्त्री चेतना पर ज़ोर दिया है। जो औरतें पर्दे और घर की चार दीवारों के अन्दर रहती थीं, वे अपना आक्रोश बुलंद स्वर में प्रकट करती हैं। नजराना के समान आमना भी अपना विरोध प्रकट करती है। आमना (डमरू की छोटी भाभी) को जब उसका पति मारने की धमकी देता है तब आमना जवाब देती है कि "तू अबके हाथ तो लगा के देख ...दारी का ये कच्चो ना चबा जाऊ तो"।[4]

आजकल मुतलक (हलाला) के विषय को लेकर लोकसभा और राज्यसभा में हलचल मच रही है । दूसरे शायद इससे परिचित नहीं है कि समाज में मुसलमान बहनें इस हलाला के नाम पर शोषित हो रही हैं। सुप्रसिद्ध हिंदी फिल्म अभिनेत्री मीना कुमारी भी इस प्रथा की शिकार हुई थी। उसके पति कमाल अमरोही भी नियाज के समान गुस्से में आकर उसे तलाक दे दिया। बाद में वह पछताता है और फिर वह अपने दोस्त के ज़रिये हलाला के बाद मीना कुमारी को वापस अपनी बीवी बना लेता है। बाद में मीना कुमारी पर क्या बीती है, किसीने कुछ जानने की कोशिश भी नहीं की। मीना कुमारी पर इसका बुरा असर पड़ता है और इस तरह वह शराब पीने लगी। उसका सवाल था– मुझमें और वेश्या में क्या अंतर है इस तरह इस गम में चालीस के आस पास उसकी मृत्यु भी हो गयी।

भगवानदास मोरवाल एक हिन्दू होते हुए भी मुसलमानों और मुस्लिम रीति-रिवाज़ों का बड़ी ही बारीकी से अध्ययन किया है। प्रस्तुत उपन्यास के द्वारा समाज में हलाला की आड़ में स्त्रियों का ज़बरदस्त शोषण ही नहीं, बल्कि आज की स्त्री-शक्ति का परिचय भी कराया गया है।

समाज में जो कुछ हो रहा है इसका पता पाठकों को सामाजिक माध्यमों के सिवा कथा रचनाओं से मिलता है। 'हलाला' उपन्यास की भाषा पात्रानुकूल और विषयानुकूल है। कथा रूप में सामाजिक याथार्थ्य पढ़े तो अनजाने ही वह पाठकों के मन में जम जाता है और उनका मन सामाजिक समस्याओं को समझने में सचेत हो जाएगा।

**संदर्भ**


1. हलाला- -भगवानदास मोरवाल, प्रकाशकः राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ 128 ।
2. वही पृष्ठ130
3. वही पृष्ठ154
4. वही पृष्ठ154



♦ षर्लिन
असिस्टेंट प्रोफसरे
सरकारी महिला महविद्यालय
तिरुवनंतपुरप, केरल -
फोन: 9605616740


# सही उत्तर चुनें

1.'बीजाक्षर' कविता संकलन किसका है ?

अ.रामदरश मिश्र

आ. गंगाप्रसाद विमल

इ. अनामिका

ई. प्रयाग शुक्ल

2. 'जूठन' किसकी आत्मकथा है?

अ.ओमप्रकाश वल्मीकी

आ.अरुण कमल

इ. मदन कश्यप

ई. राजेश जोशी

3. 'दुःख ही जीवन की कथा रही, क्या कहूँ आज जो नहीं कही'- किस कविता की पंक्तियाँ हैं?

अ.दिगंत

आ.सरोज स्मृति

इ. समय नहीं है

ई. बेचारे

4. 'चक्रव्यूह' के कवि कौन हैं?

अ. अरुण कमल

आ.लीलाधर जगूड़ी

इ. रामदरश मिश्र

ई. कुंवर नारायण

5.'तीसरा अंधेरा' कविता संकलन किसका है?

अ.कैलाश वाजपेयी

आ. अनामिका

इ. मदन कश्यप

ई. अजित कुमार

**(शेष पृ.सं. 39)**

# प्रभा खेतान की कविता में नारी

• डॉ.गीता.एम.ओ

शब्दभंडार रहित, अन्तंकरणों के बोझ से मुक्त सीधी - सरल व सपाट रूप में लिखी गई प्रभा खेतान की कविता हिन्दी काव्य संसार में नारी की सशक्त अभिव्यक्ति के साथ खड़ी नज़र आती है। साहित्य जगत में प्रभा खेतान का पदार्पण कविता के माध्यम से ही होता है। 'अपरिचित उजाले' से अहल्या' तक लगातार उनके छह कविता संग्रह प्रकाशित हुए।

प्रभा के काव्य में समाज के बिखरे छोटे - छोटे विषयों को उठाया गया है। नारी जीवन इनके काव्य की मूल अभिव्यक्ति है। सभी काव्य संग्रहों में लगभग स्त्री को ही केन्द्र में रखा गया है। अतएव प्रभा खेतान की कविताओं का समग्र अध्ययन नारी के लिए एक संदेश संप्रेषित करता है।

प्रभा खेतान का प्रथम कविता संग्रह 'अपरिचित उजाले' प्यार के ताज़े रस से सराबोर है। प्यार रूपी तोहफे की महत्ता 'बस स्टॉप पर' कविता की इन पंक्तियों से प्रकट होती है -

"आज तुमने दिया एक सुर्ख गुलाब
तुम लौट गये ऑफिस की फाइलों में
मैं आँखों में बंद गुलाब लिए
बस से घर
- - - - - - - - -
घर लौट मैंने
गुलाब दब लिया
अपनी डायरी में।"[1]

प्रभा खेतान के इस संग्रह की कविताओं में अपने आप में खोई हुई स्त्री है, तो कहीं स्कूल - कॉलेज जाती हुई अल्हड़ लड़की, तो कहीं प्यार के सतरंगी सपनों में डूबी हुई तरुणी।

प्रभा का दूसरा कविता संग्रह 'सीढ़ियाँ चढ़ती हुई मैं' में प्रेम का परिपक्व रूप सामने आता है। इस संग्रह में यथार्थवादी दृष्टिकोण प्रमुखता से उभरा है। देश, समाज, सामाजिक परिवेश, प्रकृति, प्राकृतिक उपादान आदि समग्रतः संग्रह में मौजूद हैं। समाज से व्यक्ति के रिश्ते को प्रकृति से जोड़ते हुए कवयित्री लिखती हैं-

"बीज ज़मीन में उगता है
और सीधा पेड़ बन जाता है
आकाश देखने लगता है
उसके जीने की
क्षमता।"[2]

प्रभा खेतान का तीसरा काव्य संग्रह 'एक और आकाश की खोज मैं' गहन भाव और कहीं-कहीं तो दार्शनिकता के पुट का आभास भी होता है।

उनके 'कृष्णधर्मा मैं' की पूरी कविता के दौरान वर्तमान स्थितियों में कवयित्री कृष्ण की लीला में स्वयं की साझेदारी महसूस करती है। हास उल्लास के क्षणों से लेकर महाभारत के महासंहार तक केलि कुंजों से

लेकर प्रभास - तीर्थ तक की यात्रा में अपनी हिस्सेदारी को महसूस करती हुई कवयित्री कहती हैं -

"स्वीकारती हूँ
आज अपने होने का सच
अंधेरे जगत में जैसी भी हूँ
धघूप की चाह के साथ हूँ प्रभू!
निरावरण है यह अस्तित्व
मुखौटों के व्यामोह से मुक्त।"[3]

'हुसनाबानो और अन्य कविताएँ' प्रभा खेतान का एक बिम्बात्मक काव्य संग्रह है। नारी की पीड़ा और उसके अस्तित्व को इसमें समेटा गया है।

"बस अब्बा अबकी तुम
बदल देना अपने बक्से को
एक छोटे से घर में
हाँ अब्ब!
अपने बक्से को
बदल देना
एक छोटे से घर में।"[4]

प्रभा खेतान की बहुत ही महत्वपूर्ण एवं अंतिम काव्य रचना 'अहल्या' एक लम्बी कविता के रूप में प्रकाशित हुई। इस संग्रह में प्रभा ने अहल्या का प्रत्थर बनना और राम के चरण पड़ने से उद्धार होने की पौराणिक कथा को नए संदर्भों के साथ काव्य में प्रस्तुत किया है। स्त्री के अस्तित्व को जगाती हुई प्रभा खेतान के 'अहल्या' की शुरुआती पंक्तियाँ हैं-

"अब
जब तुम
आँख खोलोगी, अहल्या!
सच मानो, मेरी बहन!
उसी वक्त खुलकर
खिलने लगेंगी
नई संस्कृति की पंखुडिया।"[5]

प्रभा खेतान की कविताओं में नारी :-

प्रभा खेतान के संपूर्ण साहित्य में ही स्त्री प्रधानता से उभरी है। कविता जगत् में स्त्री के जीवन का ही गीत है। उनकी कविताओं में प्यार करती हुई तरुणी, आत्म - सम्मान को जागृत करती हुई स्त्री, परंपरागत भूमिकाओं में जकड़ी हुई स्त्री, सुविधाओं के बीच त्रस्त स्त्री, घर का सपना देखती हुई मासूम बालिका मज़दूरी में खटती हुई स्त्री और अपने अस्तित्व की तलाश में निकली नारी की तस्वीरें उभरी हैं।

प्रारंभिक तीन कविता संग्रहों में प्यार के सपने बुनती हुई स्त्री है, मगर वह इस प्यार के ताने - बाने के बीच अपने को कभी नहीं भूलती और प्रत्येक स्थिति में अपना वजूद बनाये रखती है। प्रेमी के इंतज़ार में बालकनी में लटकी रहती है, लेकिन इस इंतज़ार की भी सीमा है।

"वह प्यार
जो उजाले में पहचाने से उरता है
मुझे उससे घृणा है,
मैं उन तमाम लोगों से भी घृणा करती हूँ
जो प्यार के सांचों में बदल देना चाहते हैं
जो हंसते फूलों
और झूमते पेड़ों को
आँखें तरेर पथरा देते हैं।"[6]

कविता की स्त्री अपनी गृहस्थी में पूर्ण रूप से डूबी हुई भी नजर आती है। दुनिया के रंजोगम से बेसुध वह अपने कार्यों को समेटने में लगी है। परिवार के प्रति अपने दायित्व को निभाते निभाते वह अपने को भूल जाती है और प्रकृति के बाहरी सौन्दर्य का आनंद लेने की फुरसत उसके पास नहीं है।

स्त्री जब ठान लेती है तो अपने चारों तरफ फैले जाल को काटकर बंदीगृह से बाहर निकल सकती है। वह सारे अवरोधों को लांघकर ऊपर उठ जाती है। प्रकृति के रेशे - रेशे में समा जाती है। अपने आत्म को पहचान लेने के बाद स्त्री अपने लिए जीना सीख जाती है। कविता की स्त्री भी यही कहती है -

"मैं भीड़ की दुनिया से
बाहर निकल आयी हूँ
बिल्कुल निस्संग

और अकेली
मुक्त
सपनों के बंदीगृह से
अब खुल गई हैं
वीस्तृत चौड़ी सड़कें।"[7]

नौकरी की तलाश में निकली स्त्री को जब बड़ी मुश्किल से नौकरी मिल जाती तो उसके मन की खुशी का कोई पारावार नहीं रहता। 'हुस्नाबानो और अन्य कविताएँ' संग्रह की रत्ना को भी यह खुशी है -

"रत्ना खुश है नौकरी पाकर
डेढ़ - सौ रुपए की तनखा पाकर
बहुत दिन बाद मिली है नौकरी
पूरे सादे तीन महीने भटकते - भटकते
न जाने कितने घर खोजते - खोजते
मिली है ऐसी नौकरी।"[8]

मगर वह यह भी जानती है कि जब तक उसके शरीर में काम करने की ताकत है तब तक उसका पेट भरेगा, परिवार का पालन होगा। जिस दिन इस देह की शक्ति जवाब दे जाएगी, उस दिन उसकेलिए रोटी पाना भी मुश्किल हो जाएगा। तभी तो वह अपनी सहेली तथा स्वयं को समझाती हुई कहती है -

"थोड़ा रुक जा बहन
इतना मत खटा शरीर को
शरीर ही तो हमारी पूंजी
शरीर ही हमारा औजार
शरीर ही हमारी औकात।"[9]

प्रभा खेतान की कविता में अपने मातृत्व पर गर्व महसूस करती हुई स्त्री है। स्कूल गए बच्चों की चिंता करती माँ है। बच्चों के प्रति माँ की ममता तो सिर्फ माँ ही पहचान सकती है, क्योंकि प्रसव की असह्य वेदना के बाद सृजन का श्रेय उसे ही मिलता है। वह बच्चों को अपनी हड्डियों का रस पिलाकर पाल सकती है। मन की वेदना को व्यक्त करती हुई प्रभा खेतान की स्त्री कहती है -

"मैं एक औरत
बहुत प्राचीन

सभ्यता के आदिकाल से
पैदा करती आ रही बच्चे
जिसके पास
दुनिया की हर आवाज़ मज़बूत
आज भी है शांति की आवाज़।"[10]

'कृष्णधर्मा मैं' की नारी को अपने अस्तित्व पर गर्व है। उसे अपने अंतर्मन में कृष्ण का अस्तित्व महसूस होता है। नारी अपनी अस्मिता को बचाने के लिए खुद सक्षम है और वह मानती है कि वह स्वयं ऐसा नहीं कर पाती तो किसी पुरुष को नहीं पुकार सकती। आत्म सम्मान से लबरेज स्त्री कृष्ण को भी नहीं पुकारना चाहती।

प्रभा खेतान के काव्य की स्त्री देवी का रूप धारण कर पत्थर की सूरत नहीं बनना चाहती है। वह तो एक साधारण इंसान बनकर समाज के बीच बैठकर दुनिया को अपने अस्तित्व से अवगत कराना चाहती है। वह सोचती है कि स्त्री के ऊपर पुरुष ने कैसा मोहक जाल फेंक रखा है। एक आता है, उसे जानवर की तरह चबा जाना चाहता है और दूसरा आता है, उसे देवी कहकर निष्क्रिय कर जाता है। नारी को कभी पत्थर की मूरत बनाकर श्रद्धा अस्त्र से बींध दिया जाता है, तो कभी शिला बनाकर सुनसान जंगल में तनहा छोड़ दिया जाता है। चाहे कोई सीता हो, द्रौपती हो या अहल्या हो सबको गुज़रना पड़ा पुरुष के इस ऐंद्रजालिक आतंक के मध्य से। हर बार पुरुष के अहंकारी पंजे में स्त्री तड़पती रही।

इस प्रकार प्रभा खेतान की कविताओं में उभरी हुई स्त्री कहीं कमज़ोर नहीं पड़ती, और प्रत्येक परिस्थिति में अपने 'मैं' को जिंदा रख पाती है। चाहे वह गरीब हो, चाहे अमीर, मगर है आत्मविश्वास से लबरेज। परंपरागत चौखटे में कैद किए हुए अपने अस्तित्व को पूर्णतया मुक्त कराने के लिए संकल्पबद्ध कविता की नारी उन्मुक्त गगन को अपने विचरण का आंगन बनाती नज़र आती है।

## संदर्भ


1. अपरिचित उजाले : प्रभा खेतान, अक्षर प्रकाशन, पृ.सं. 20
2. सीढ़ियाँ चढ़ती हुई मैं - प्रभा खेतान, इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन, पृ.सं. 27
3. कृष्णधर्मा मैं : प्रभा खेतान, स्वर समवेत, पृ.सं. 14
4. हुस्वाबानो और अन्य कविताएँ - प्रभा खेतान, स्वर समवेत, पृ.सं. 14
5. अहल्य : प्रभा खेतान, सरस्वती विहार, पृ.सं. 3
6. अपरिचित उजाले - प्रभा खेतान, पृ.सं. 16
7. वही, पृ.सं. 67
8. हुस्नाबानो और अन्य कविताएँ, पृ.सं. 39
9. वही, पृ.सं. 61
10. वही, पृ.सं. 57



♦ **डॉ.गीता.एम.ओ**

श्रीशंकराचार्या संस्कृत विश्वविद्यालय

तिरुवनंतपुरप, केरल राज्य।

फोन : 9497850099



# सूचना

**NET (हिन्दी) तथा Spoken Hindi**

**की कक्षाओं में प्रवेश पाने को**

**इच्छुक व्यक्ति संपर्क करें -**

**फोन : 9946253648, 0471 - 2332468**

# भ्रष्टाचार में डूबा भारतीय समाजः 'सपन में गुलाब' के संदर्भ में

♦ अंजना. डी

हिन्दी कथा साहित्यिक जगत में उपन्यासकार तथा कहानीकार के रूप में प्रतिष्ठित लेखिका है - चंद्रकांता। उनकी रचनाए कश्मीर का दर्पण है, यही ख़ासियत है उनकी कृतियों का। उनके सात उपन्यास तथा चौदह कहानी संग्रह अब तक निकले हैं। 'अर्थांतर' (1981), 'बाकी सब खैरियत है' (1983), 'ऐलान गली ज़िंदा है' (1984), 'अंतिम साक्ष्य' (1990), 'यहाँ वितस्ता बहती है' (1992), 'अपने - अपने कोणार्क' (1995) तथा 'कथा सतीसर' (2001) उनके उपन्यास हैं। कहानी संग्रह हैं - 'सलाखो के पीछे' (1975), 'गलत लोग के बीच' (1994), 'पोशनुल की वापसी' (1988), 'दहलीज़ पर न्याय' (1989), 'ओ सोनकिसरी' (1991), 'कोठे पर कागा' (1993), 'सूरज उगने तक' (1994), 'काली बर्फ' (1996), 'कथा नगर' (2008), 'बदलते हालत में' (2002), 'अब्बू ने कहा था' (2005), 'तैतीबाई' (2007) 'अलकटराज़ देखा?' (2013) तथा 'मेरी कथा यात्रा' (2018)। 'अब्बू ने कहा था' कहानी संग्रह में 11 कहानियाँ संकलित हैं। विषय और कहानियाँ इस प्रकार हैं- वृद्धावस्था की समस्या (कहानी- राम में सागर), प्रेम संबंध (चुप्पी की घुन), भ्रष्टाचार (सपने में गुलाब), अपनत्व की उदात्तता (लाजबाबू), तलाकशुदा (लगातार युद्ध), दांपत्य जीवन में टूटन (इस दौड़ में कहानी), कामकाजी नारी की स्थिति (तफरीह उर्फ चकई - चकरधिन्नी), पाश्चात्य सभ्यता (पुरस्कार), आतंकवाद का परिणाम (जलकुण्ड़ का रंग और नुसरत की आँखें) कश्मीर से निष्कासित परिवारों का त्रासिक वर्णन (शायद संवाद), आतंकवाद और आतंक (अब्बू ने कहा था) आदि। 'अब्बू ने कहा था' कहानी संग्रह की एक भावुक और प्रासंगिक कहनी है - 'सपने में गुलाब'। 'सपने में गुलाब', 8½ पृष्ठों में समाहित केवल एक कहानी नहीं। मास्टर दीनानाथ मात्र इस कहानी का एक पात्र भी नहीं, यह कहानी भारत के हरेक आम व्यक्ति का यथार्थ जीवन है तथा मास्टर दीनानाथ एक औसत आदमी का प्रतीक है। स्कूल मास्टर दीनानाथ बच्चों को समझाते हैं - "चाहना स्वाभाविक है बच्चो। हमारा अधिकार भी! बड़ी आकांक्षाओं की बात मैं नहीं करता, जीने के लिए ज़रूरी ख्वाहिशें ; यही - रोटी, कपड़ा, मकान! अब अगर वह चाह भी पूरी न हो, या उसे पूरा होने में समय लगे, तो निराश होकर, हाथ पर हाथ घरे बैठना, तो हार माननी हुई न?"[1] ये तो एक साधारण व्यक्ति के मन को झकझोर करनेवाली पंक्तियाँ हैं। रोटी, कपड़ा, मकान ये तो हर आदमी की साधारण आवश्यकता है। लेकिन आज इनकी प्राप्ति के लिए आम व्यक्ति सरकारी दफ्तरों में चक्कर लगाकर अपना जीवन गुज़ारता है। उसे चपरासी से लेकर बड़े अफ़सरों जैसे लोगों का मुँह मीठा कराना है। हर सरकारी कर्मचारियों का दायित्व तो यह होता है कि वे जनता की सेवा करें, नियमानुसार उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति करें। लेकिन यही हो रहा है कि साधरण जनता को किसी न किसी तरह कष्ट दे। विवशतावश जनता

भ्रष्टाचार का पालन करके अपना कार्य इन कर्मचारियों से करवाती है। इसमें अचरण की बात तो नहीं है क्योंकि जनता सरकारी दफ़्तरों में चक्कर लगाकर थकी हुई है। अब वे किसी न किसी तरह अपनी आवश्यकता की पूर्ति करना चाहते हैं। लेकिन इस प्रकार के विचारों से देश का भविष्य कलंकित हो जाएगा। इस कहानी में ऐसे अनाचारों, अतः भ्रष्टाचार का खुला - सा विरोध करके मास्टर दीनानाथ अपनी सेवानिवृत्त शेष ज़िंदगी सरकारी दफ़्तरों में भटकते रहने का निश्चय करता है। वे कहते हैं कि "सिफ़ारिशें कमज़ोर और कुसूरवार लोग तलाशते हैं। मैं न कमज़ोर हूँ और न गुनहगार। इन सिफ़ारिशों और मुट्ठी गरम करने की रिवायतों ने ही करप्शन को बढ़ावा दिया है।"2

'सपनों में गुलाब' कहानी के बीच में ही पता चलता है कि यही इसका उत्तम शीर्षक है। कहा जाता है कि हममें कुछ पाने की तीव्र इच्छा होती है तो उसका साकार रूप हम सपनों में देखते हैं। उसीप्रकार मास्टर का सपना था एक छोटा - लाल छतवाला घर। उन्होंने तो घर बनवाया और छोटी - मोटी दिक्कतों के बाद उसकी भागिक पूर्ति हुई। अब वे तो घर के ऊपर बच्चों की पढ़ाई केलिए एक कमरा बनवाते हैं और कंपलीशन सर्टिफिकेट के लिए वे इंजिनियर के दफ़्तर में घूमते फिरते हैं। दफ़्तर से हरेक नए टीम घर आते -जाते हैं और नए - नए वॉयलेशन्स ढूँढ़ निकालते हैं। जो वायलेशन था उसके लिए हरजान भी पहले ही वे दे चुके थे। अब टीम के लोगों ने यह खोज निकाला कि छज्जा बाहर है इसलिए घर को तोड़ना है। नियमानुसार सब कुछ ठीक से करने पर भी कुछ न कुछ वॉयलेशन्स सरकारी कर्मचारी खुद ढूँढ़कर आगे के कार्यों में बाधा डालते हैं। यह तो उनकी आदत है। दीनानाथ के घर में इन्सपेक्शन टीमवाले आते हैं और वे नक्शा देखकर कहते हैं - "यह वॉयलेशन है। इसे तोड़ना पड़ेगा। हमारे रूल्स बड़े स्ट्रिक्ट हैं।"[3] वॉयलेशन दीनानाथ जैसे व्यक्ति नहीं सरकारी कर्मचारीयाँ ही करते हैं और आम जनता को दुविधा में डालते हैं। ये हैं उनके स्ट्रिक्ट रूल्स। दीनानाथ का यह कथन बिलकुल सही और प्रासंगिक है - "मैंने तो बच्चों की पढ़ाई के लिए एक छोटा कमरा - भर ही बनवाया है, वह भी नक्शा पास करवाकर! लोग तो ढ़ाई - ढ़ाई मंजिलें खड़ी कर देते हैं। सरकार इजाज़त भी देती है। अब जाने क्यों ये लोग नयी - नयी वॉयलेशन्स निकालकर हमें परेशान कर रहे हैं? देखना तो पड़ेगा कि उनकी मंशा क्या है।"[4] अपना एक घर, ऐसा एक सपना हर व्यक्ति का होता है। लेकिन इसको साकार करने के लिए उसे सरकारी दफ़्तरों में दौड़ना पड़ता है। इसप्रकार दौड़ने से उसकी जेब खाली हो जाती है तथा जूता घिस जाता है।

आज बिना अंड़रहैण्ड तरीकों से कोई काम नहीं चलेगा। यही है आज की हालत। समाज तो अब इसप्रकार के साँचे में ढाला हुआ है। कहानी में मास्टर जी के बेटे का कथन है - "बाबूजी, आप लाख कोशिश करो, बिना मुट्ठी गरम किए, ये लोग आपका काम करनेवाले नहीं हैं। यह आज का कायदा भी है और हकीकत भी। हम क्या कर सकते हैं।"[5] इसमें बेटे के कथन में कोई कसूर नहीं है, वह तो भली - भाँति जानता है कि आज कोई भी कार्य आसानी से नहीं हो सकता। इसके ठीक विपरीत विचारवाला है मास्टर जी। वे किसी के सामने सिर न झुकाएँ और अपने विचारों पर डटे रहेंगे।

सपने की पूर्ति के लिए मास्टर जी किसी भी हद तक कठिनाइयों को सहिष्णुता के साथ सहने के लिए तैयार हैं और वे आगे बढ़ते हैं - दफ़्तरों की ओर। आखिरी प्रतीक्षा बड़े इंजीनीयर साहब से मास्टर को

मिलती है कि घर के ऊपर वाले हिस्से की दुबारा पैमाइशी करेगी और दो दिन के बाद रपट तैयार करेगा। साहब की विश्वास भरी बातें सुनकर उनका मन शांत हो जाता है और रात को सपने में उन्होंने अपने सपने को सच होते देखा। "एक छोटा - सा लाल छतवाला घर था, हरे - भरे नन्हे लॉन के किनारे गुलाब की क्यारियाँ महक रही थीं और मास्टर जी आरामकुर्सी पर अधलेटे, बड़े मनोयोग से कई पुस्तक पढ़ रहे थे, जो मोहलत न मिलने से अभी तक अनपढ़ रह गयी थी।"[6] क्या, असल में उनकी क्यारियों में गुलाब खिलेंगे, बेपढ़ी गयी पुस्तकों को वे पूर्ण रूप से पढ़ेंगे? इन सारे प्रश्नों पर पाठकों को भी ज़रूर विचार करना है, क्योंकि यह तो पाठकों भी कहानी है। शायद यही होने की संभावना है कि नए टीम फिर से आएँगे, वॉयलेशनस ढूँढ़ेगे। अतः फिर से मास्टर को दफ़्तरों में चक्कर लगाना है।

भारत भ्रष्टाचार में डूबा हुआ है। जब तक देश इससे मुक्त न हो तब तक साधारण जनता को दीनानाथ की तरह दौड़ना पड़ेगा इधर - उधर। लेकिन दृढ़-विश्वास और उम्मीद के साथ हमारी इच्छाओं की पूर्ति के लिए मास्टर जी के समान सिर न झुकाकर आगे बढ़ना है, न पीछे की ओर। कुमार्ग का अनुगमन करके लक्ष्यपूर्ति पर ज़रूर पहुँचेगे। पर यह सच्चा विजय नहीं होगा ऐसे करने से देश का और विनाश होगा। ऐसा करके और कलंकित हो जाएगा। इसलिए अगर कम से कम 5 या 10 व्यक्ति इन भ्रष्टाचारों के विरुद्ध आवाज़ उठाकर अपने अधिकारों के लिए लड़ाई करेंगे तो भ्रष्टाचार का नामोनिशान ही न रहेगा, क्योंकि आम आदमी का अधिकार है - रोटी, कपड़ा, घर। भ्रष्टाचार की जड़ें मज़बूती से भारत भर में फैली हैं, इसे पूर्ण रूप से उखाड़ने के लिए एक साथ हाथ मिलाना चाहिए। झट से परिवर्तन की प्रतीक्षा तो मत करना, समय तो लगेगा। इसका फल शायद हमें नहीं बल्कि आनेवाली पीढ़ियों को मिलेगा और यही पीढ़ी आगे एक भ्रष्टाचार हित भारत का निर्माण करेगी।

चंद्रकांता अपनी इस कहानी में साधारण व्यक्ति की दयनीय दशा तथा भ्रष्टाचार का जीता जागता चित्रण करती हैं साथ ही पाठकों से नहीं हम नागरिकों पर कई प्रश्नचिह्न डालकर और जनता को समझाने की कोशिश करके कहानी की समाप्ति होती है। अगर तुम दीनानाथ के स्थान पर हो, तो क्या करोगे? हमारे अधिकारों के लिए क्या हमें किसी के सामने सिर झुकाना है? ज़िन्दगी भर ऐसे दौड़ते रहना है? जहाँ आवाज़ उठानी है, वहाँ आवाज़ उठाओ। केवल शांत मार्ग से आज कुछ भी न होगा, आँख मूँदकर अन्यायों को सहने की कोई ज़रूरत नहीं है। हम भारतीय हैं, लोकतंत्री देश है भारत। यहाँ का शासन तंत्र जनता से, जनता के लिए है। स्वार्थी मानव ने ही भ्रष्टाचार को जन्म दिया है । इसलिए हर भारतीय नागरिक का धर्म है, उसका संपूर्ण नाश करना। अल्बर्ट आइंस्टीन के शब्दों में कहें तो -"दुनिया की बर्बादी अमंगलकारियों से नहीं होगी बल्कि चुपचाप उसे देखते रहेगा, उसी के द्वारा होगा।"

## संदर्भ


1.'अब्बू ने कहा था' कहानी संकलन- चंद्रकांता, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, 2005, पृ.सं. 34

2.वही, पृ.सं. 38 3.वही, पृ.सं. 36

4.वही, पृ.सं. 37 5.वही, पृ.सं. 38

6.वही, पृ.सं. 38



◆ शोध छात्रा, सरकारी वनिता कॉलेज,
तिरुवनन्तपुरम, केरल राज्य।
फोन : 9847557404

# अमरकांत की कहानियों में जीवन यथार्थ

• विजयलक्ष्मी.एल

हरेक रचनाकार की सफलता अपनी रचना-प्रक्रिया में यथार्थ का खुला चित्रण करने पर निर्भर रहता है। नई कहानी के प्रमुख हस्ताक्षर अमरकांत ने अपनी कहानियों में मानव के संघर्ष भरित जीवन को उसकी असलियत के साथ पाठकों के सामने प्रस्तुत किया है। वास्तविक जीवन में जो कुछ उन्होने देखा और परखा उसको ही अपनी कहानियों का विषय बनाया। इसलिए उनकी कहानियाँ युग-सापेक्ष और सामाजिक प्रतिबद्धता रखनेवाली बन गयी हैं। मानव जीवन के विविध पहलुओं की नब्ज़ पकड़ने मे उनकी कहानियाँ सफल हुई हैं।

आज़ादी के बाद भारत के राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक स्थिति में भीषण परिवर्तन हुए। फलस्वरूप जनता घोर निराशा में पड़ गए। इस परिप्रेक्ष्य में ही अमरकांत का साहित्य में प्रवेश हुआ। मोहभंग से पीड़ित जनता की करुण एवं त्रासद ज़िन्दगी को उन्होंने देखा और परखा। अमरकांत की अधिकांश कहानियाँ इस भोगे हुए यथार्थ के प्रमाण हैं। 'दोपहर का भोजन', 'डिप्टि कलक्टरी', 'फर्क', 'इंटरव्यू', 'ज़िन्दगी और जोंक', 'मकान', 'नौकर', 'कुहासा', 'हत्यारे' जैसी कहानियाँ भारत के जन जीवन की जीवंत तस्वीर प्रस्तुत करती हैं।

एक देश की विफल लोकतांत्रिक प्रणाली और उसमें व्याप्त भ्रष्टाचार लोगों को हत्यारे तक बनने को प्रेरित करते हैं। अमरकांत की 'हत्यारे' कहानी इसका दस्तावेज़ है। शिक्षित बेरोज़गार युवावर्ग की दिशाहीन ज़िन्दगी का मार्मिक चित्रण भी अमरकांत ने 'डिप्टि कलक्टरी' और 'इंटरव्यू' जैसी कहानियों में किया है। शिक्षा और प्रतिभा की जगह सिफारिश ने अपना स्थान हड़प कर लिया है। पैसे के बलबूते पर योग्य व्यक्ति की उपेक्षा सर्वथा हो रही है। इसके कारण 'घर' कहानी के विनय और 'डिप्टी कलक्टरी' के नारायण को नौकरी केवल सपना ही रह जाती है। भ्रष्टाचार के माध्यम से सरकारी विभागों ने देश के अधिकांश नवयुकों को बेकार बना दिया। चुने जानेवाले को पहले ही चुनकर केवल इंटरव्यू का बहाना करनेवाली सामाजिक स्थिति की ओर लेखक ने 'इंटरव्यू' जैसी कहानियों के माध्यम से तीखा प्रहार किया है।

बेरोज़गारी की समस्या आदमी को भूख, गरीबी और बीमारियों की ओर ले जाती है। 'दोपहर का भोजन' कहानी इन समस्याओं का सच्चा चित्रण हमारे सामने पेश करती है। जीवन-यापन के लिए संघर्ष करनेवाले परिवार और उसके बीच जूझनेवाली गृहस्वामिनी सिद्धेश्वरी की कथा के माध्यम से आज के निम्न मध्यवर्गीय परिवार की जीवनचर्या की वास्तविक स्थिति को कहानी में दर्शाया है। 'नौकर' कहानी के जंतु को नाम के अनुरूप ही जीवन बिताना पड़ता है। 'ज़िन्दगी और जोंक'के रजुआ को भी पशु जैसा जीना पड़ता है। वह जिस मोहल्ले में रहता है वहाँ के लोग उसका निरंतर शोषण करते रहते हैं। अपने प्रति होनेवाले अमानवीय व्यवहार को सहकर उसे उन लोगों के बीच ही जीना पड़ता है, जो उसकी विवशता का परिचायक है। 'केले ','पैसे और मूँगफली' कहानी में आनंदमोहन

अखबार बेचकर अपने बच्चे के लिए केला लाता है। 'मूस' कहानी के मुनरी गरीबी से त्रस्त ज़िन्दगी से तंग आकर पति मूस को छोड़ती है। 'शाम', 'तंदुरुस्ती का रोग', 'बढ़ता पौधा','जन्मकुंडली' जैसी कहानियों में भी अमरकांत ने गरीबी का ज़बरदस्त चित्रण किया है।

'कुहासा' ,'रामु की बहन','बहादुर' जैसी कहानियों में गरीबों का शोषण करनेवाली सामाजिक स्थिति देखी जाती है। 'फर्क' कहानी में भूख मिटाने के लिए खाना चुरानेवाले के प्रति नफ़रत और डाकू के प्रति आदर की दृष्टि से देखनेवाले समाज के दुहरेपन को दर्शाया गया है।

बदलते जीवन मूल्य ने मानव को पारिवारिक विघटन की ओर ढकेल दिया। पारिवारिक रिश्ते में आये बदलाव का यथार्थ चित्रण भी अमरकांत की कहानियों में यत्र-तत्र मिलता है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। 'पेड-पौधे' कहानी में परंपरागत एवं नैतिक मूल्यों के घट जाने की स्थिति को अभिव्यक्त किया गया है। उपेक्षित पुरानी पीढ़ी की संवेदना को 'उनका जाना और आना' कहानी के माध्यम से लेखक ने चित्रित किया है। 'सेवानंद' कहानी में भी वृद्धावस्था में एकाकी जीवन जीने के लिए अभिशप्त वृद्दों की ज़िन्दगी की ओर संकेत किया है। आधुनिकता बोध की झलक 'दुर्घटना' कहानी में मिलती है। ट्रेन यात्रा में दुर्घटना होने की खबर सुनकर कथानायक खुद अपनी ज़िन्दगी बचाने के लिए करनेवाली हरकतों को कहानी में दिखलाया गया है। 'श्वानगाथा' में व्यवस्था-विकृति का सच्चा चित्र मिलता है। आम जनता को जब कुत्ते काटते हैं तब प्रशासन चुप रहता है। लेकिन समाज में प्रतिष्ठा प्राप्त एक व्यक्ति पर कुत्ते का आक्रमण होने पर प्रशासन तुरंत कारवाई लेता है।

अमरकांतजी की कहानियाँ समसामायिकता के चित्रण में अनुपम सिद्ध हुई हैं। आज सभी क्षेत्रों में व्यावसायिकता का फैलाव है। शिक्षा के क्षेत्र में बढ़ती व्यावसायिकता का चित्र उन्होंने एक ओर 'अंतरात्मा' नामक कहानी में किया है तो दूसरी ओर 'मुलाकात', 'कलाप्रेमी' जैसी कहानियों में साहित्य के क्षेत्र में हुई व्यवसायिकता का यथार्थ चित्रण किया है। 'बीमारी' कहानी के माध्यम से लेखक ने चिकित्सा क्षेत्र में आयी व्यावसायिकता से उत्पन्न मानव जीवन की दुर्दशा का बयान किया है।

व्यक्ति परिवार की इकाई है। व्यक्ति से ही सामाजिक विकास होता है। विवाह से सामाजिक बन्धन दृढ़ होता है। लेकिन समाज में विवाह आज भी एक समस्या है। 'लड़की की शादी' कहानी में नायक पैसे के लालच में एक कुरूप लड़की से शादी करता है। 'संत तुलसीदास और सोलहवाँ साल' कहानी में छोटी उम्र में ही शादी जैसे बन्धन में धकेलकर लड़के-लड़कियों की प्रगति में बाधा डालनेवाले परिवार का चित्रण है। 'रिश्ता' कहानी में धर्म प्रेम के बीच बाधक बन जाता है। 'लड़की और आदर्श' कहानी में प्रेम को ठुकराकर आदर्श के पीछे पड़े परिवार के धोखे का शिकार बनी लड़की की कहानी कही गयी है।'असमर्थ हिलता हाथ' में अपने प्रेमी से ही शादी करने केलिए हठ करनेवाली बेटी के संबन्ध में सही निर्णय लेने में असमर्थ होनेवाली माँ अपनी बेटी की ज़िन्दगी बरबाद करती है।

समाज के सफेदपेश लोगों की चालाकियों को भी अमरकांत ने अपनी कहानियों में उभारा है। 'आमंत्रण', 'धरती के लिए', 'सहयात्री' आदि कहानियों में इसका खुला चित्रण हुआ है। 'दर्पण','देश के लोग', 'सफ़र', 'लोक-परलोक' आदि कहानियों में राजनीतिक छल-छदम को दर्शाया गया है।

साम्प्रदायिकता को केन्द्र में रखकर भी अमरकांत ने कहानियाँ लिखी हैं। हिन्दू-मुसलमान के आपसी मधुर एवं कटु संबन्धों का वर्णन 'मौत का नगर' कहानी में किया गया है। 'बीच के जीवन' में कर्फ्यू के बाद की शहर की स्थितियों को दर्शाया गया है। साम्प्रदायिक दंगे करवाकर राजनीतिक प्रभाव बढ़ानेवाले नेता का सही चित्रण 'जनशत्रु' कहानी में किया गया है।

महानगरीय संस्कृति में नैतिकता का पतन अमरकांत की 'सुख और दुख का साथ', 'सेवानंद', 'बधाई', 'दुर्घटना', 'श्वानगाथा','पेड़-पौधे' जैसी कहानियों में देखने को मिलता है। समाज के स्वार्थी, झूठे, फ़रेबी आदि चरित्रों को इन कहानियों के माध्यम से उन्होंने प्रस्तुत किया है। शहरीकरण के प्रभाव से उभरनेवाले बनावटी चरित्रों को 'पुनरागमन' जैसी कहानी के द्वारा पाठकों के सामने पेश किया गया है।

'निर्वासित', 'स्वामी' जैसी कहानियों में वैवाहिक जीवन की तनावपूर्ण मानसिकता में घिरे हुए व्यक्ति का चित्रण मिलता है। भारतीय समाज में नारी की जो स्थिति है उसको भी अमरकांत ने अपनी कहानियो के ज़रिए जीवन्त बना दिया है। 'लड़का-लड़की', 'पलाश के फूल' जैसी कहानियों में शोषित नारी पात्र का चित्रण हुआ है तो 'प्रिय-मेहमान' की नायिका समय पर प्रतिक्रिया करनेवाली है। समाज के शिक्षित लोगों की अपेक्षा अशिक्षित लोग अंधविश्वास को अधिक माननेवाले हैं। इस समस्या पर भी अमरकांत ने अपनी दृष्टि चलायी है। 'मकान' कहानी का मनोहर अपने घर की हालत बिगड़ने पर रहनेवाले मकान को ही दोषी मानता है। इसपर वह ज्योतिषी के पास जाकर हल ढूँढ़ता है। 'जन्मकुंडली' के शिवदास बाबू ज्योतिषी के कहने पर केवल पीली वस्तु से ही संपर्क रखते हैं। इस प्रकार 'बउरेया कोदो', 'छिपकली' आदि कहानियों में भी आंधविश्वास की समस्या को विभिन्न संदर्भों में प्रकट किया गया है।

विवेच्य कुछ कहानियों के आधार पर कहा जा सकता है कि अमरकांतजी ने मानवीय जीवन का हरेक पक्ष पकड़ने की कोशिश की है। उनकी कहानियाँ अपनी सूक्ष्म लेखकीय दृष्टि की सूचक हैं। समकालीन कहानीकारों ने अपनी कहानियों में पात्रों का चयन इसप्रकार करते हैं कि अभाव एवं तनावग्रस्त ज़िन्दगी में अपना आत्मविश्वास खोकर असफल और निराश जीवन जीता है। लेकिन अमरकांत के पात्र अभावग्रस्त स्थिति में भी निराश नहीं होते हैं। विषम परिस्थितियों में भी उनके पात्र अपने अस्तित्व को बनाये रखने के लिए प्रयत्नशील रहते हैं। जीवन के प्रति ऐसा सकारात्मक दृष्टिकोण अमरकांत की कहानियों की खासियत है। परिणामस्वरूप समाज में व्यक्ति के बाह्य और अंतर्मन के संघर्ष की वास्तविक तस्वीर प्रस्तुत करने में अमरकांतजी सफल सिद्ध हुए हैं।

**सहायक ग्रन्थ**


1. अमरकांत की संपूर्ण कहानियाँ- भाग-1, भाग-2, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन,2013
2. अमरकांत की कहानियों का अनुशीलन- डां.नारायण बागुल, अतुल प्रकाशन, 2016
3. प्रयाग अर्द्धवार्षिक - सुमीत द्विवेदी- जुलाई 2014
4. साहित्य और यथार्थ -हावर्ड फास्ट - वाणी प्रकाशन, प्रथम संस्करण-1993
5. कहानीकार अमरकांत - डां.सुभाष जाधव - विद्या प्रकाशन प्रथम-2012



♦ शोध छात्रा, यूनिवर्सिटी कालिज

तिरुवनन्तपुरम, केरल राज्य।

फोन: 9061036390

# समकालीन हिन्दी साहित्य दशा और दिशा

• अजित्रा .आर .एस

भारतीय संदर्भ में आधुनिक ज्ञान-विज्ञान , औद्योगिकीकरण और प्रौद्योगिकी (टेक्नोलॉजी) के फलस्वरूप उत्पन्न मानवीय स्थितियों की नवीन साक्षात्कार दृष्टि आधुनिकता है, जो रोमांटिक और मिथकीय भावबोध से रहित ज्ञान और बुद्धि प्रधान है। इसके प्रकाश में देश, धर्म, राष्ट्र, ईश्वर और जीवन की नयी-नयी व्याख्यायें हुईं। लोकतन्त्र, साम्यवाद और नागरीकरण में व्यक्ति और उसकी निजी पहचान जब खोने लगी तब इस खोये हुए व्यक्तित्व की खोज प्रक्रिया को आधुनिकता कहा गया।

कविता की मूल प्रवृत्ति लोकधर्मी रही है। लोकमन ही कविता की वाणी को स्वर देता है। समकालीन हिंदी कविता में लोक और लोक सौंदर्य अपनी पूरी गतिशीलता के साथ विद्यमान है। रघुवीर सहाय, केदारनाथ अग्रवाल, त्रिलोचन और धूमिल से लेकर नए-नए कवियों ने भी सहज भाव से अपने नगर, कस्बे और गाँव के लोक सौंदर्य को विविध रूपों में वाणी दी है। नए कवियों में अरुण कमल, लीलाधर जुगूड़ी, राजेश जोशी, अनामिका, कात्यायनी ,एकान्त श्रीवास्तव आदि हैं, जिनकी कविताओं में लोक और लोक धर्मिता की नाना प्रकार की छवियाँ देखी जा सकती हैं। समकालीन कविता में तनाव, संत्रास, विसंगति और अनिश्चयग्रस्त मानव की तस्वीर है। समकालीन कविता नयी कविता के उस स्वर का विकास है, जो आज की दैनिक ज़िन्दगी की अनुभूतियों को अत्यंत सहजता से अभिव्यक्ति देती है।

छायावादोत्तर युग हिन्दी-गद्य की सर्वांगीण उन्नति का युग है। इस युग के लेखकों ने कहानी, उपन्यास , आलोचना आदि क्षेत्रों में नए आयामों का उद्घाटन करने के साथ साथ अपने मनोभावों की अभिव्यक्ति केलिए रिपोर्ताज और इंटरव्यू-सदृश सर्वथा नवीन साहित्य रूपों का भी प्रश्रय लिया।

समकालीन हिंदी नाटकों की स्थिति बहुत उत्साहजनक नहीं है। समकालीन हिंदी नाटक में नाटककारों की तीन पीढ़ियां सक्रिय रही हैं। एक ने स्वाधीनता के पूर्व नाटक लिखना प्रारंभ किया था। दूसरी ने स्वाधीनता के बाद नाट्य की रचना प्रारंभ की । तीसरी जिसने सातवें दशक के अंतिम वर्षों में और आठवें दशक में लिखना प्रारंभ किया। इस कालावधि के नाटककारों में सुरेन्द्र वर्मा, शंकर शेष, गिरिराज किशोर, भीष्म साहनी, नन्द किशोर आचार्य, मन्नू भंडारी, मृदुला गर्ग आदि का नाम उल्लेखनीय हैं।

इस समय हिंदी में गद्य विधाओं में सबसे अधिक लोकप्रिय विधा 'उपन्यास' है। वर्तमान कालावधि में कई पीढ़ियों के उपन्यासकार सक्रिय रहे हैं। पूंजीवादी, बाज़ारवादी और उपभोगवादी अर्थ व्यवस्था, महानगरीय परिवेश और सामाजिक गतिशीलता ने अब उपन्यासकार

को वर्ग प्रतिनिधित्व से अलग करके स्वायत्त व्यक्ति इकाई बना दी है। फलतः उपन्यासकारों का अनुभव क्षेत्र सीमित और विशिष्ट होता गया है। स्त्री-विमर्श और दलित-विमर्श जैसी चीज़ें इसी बदलाव के परिणाम हैं। नयी पीढ़ी के उपन्यासकारों केलिए मौलिकता बीज मंत्र हो गयी है ।

आधुनिक काल में जब कहानी पाठ्य हो गयी,तो वही कहानी सार्थक और महत्वपूर्ण मानी गयी, जो कहानीकार की आत्माभिव्यक्ति के साथ-साथ जीवन की गंभीर आलोचना भी प्रस्तुत करती है। महीप सिंह ने 'सचेतन कहानी' की व्याख्या में नयी कहानी की निषेधात्मक प्रवृत्तियों का विरोध करते हुए जीवन को सकारात्मक सचेत भाव से जानने और जीने पर बल दिया। सचेतन कहानी आन्दोलन के साथ जुड़नेवाले कुछ कहानीकार अकहानी की प्रवृत्ति के कहानीकार हैं और वे 'अकहानी आन्दोलन' में सम्मिलित भी हुए। अकहानी आन्दोलन के शिथिल पड़ते-पड़ते कमलेश्वर समान्तर कहानी (1972) का आन्दोलन लेकर सामने आ गए। आगे जनवादी कहानी, सक्रिय कहानी आदि भी आयीं। समकालीन कहानीकारों में से प्रायः मध्यवर्गीय हैं। इसलिए उन्होंने मध्यवर्गीय जीवन की समस्याओं और सोच को अपनी कहानियों में प्रमुखता दी । इस काल की कहानियों के पात्र अपनी अस्मिता, स्वायत्तता और विशिष्टता केलिए अत्यधिक बेचैन दिखाई देते हैं ।

गद्य विधाओं में निबंध ऐसी विधा है, जिसके स्वरूप, लक्षण, और सीमाएं इतनी अनिश्चित हैं कि उसको लेकर रचनाकारों और अध्येताओं के बीच अनेक भ्रान्तियाँ व्याप्त हैं । हज़ारीप्रसाद द्विवेदी और विद्या प्रसाद मिश्र के बद सबसे अधिक प्रतिभाशाली निबंधकार कुबेरनाथ राय हैं। सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, रघुवीर सहाय, मनोहर श्याम जोशी, राजेन्द्र यादव आदि साहित्यकारों में भी हमें निबंधों की किंचित झलक मिलती है।

अन्य गद्य विधाओं के अंतर्गत जीवनी, आत्मकथा, यात्रावृत्त, संस्मरण, रेखाचित्र, साक्षात्कार, पत्र, दैनिकी लेखन, गद्यकाव्य और रिपोर्ताज आदि को सम्मिलित किया जा सकता हैं। इन विधाओं में कई समकालीन लेखक लिख रहे हैं। इस तरह समकालीन हिंदी साहित्य अनेक विधाओं में सफल लेखन के साथ आगे बढ़ता जा रहा है ।

## संदर्भ ग्रन्थ


1. हिंदी साहित्य का इतिहास - डॉ.नगेन्द्र
2. हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास - बच्चन सिंह
3. हिंदी साहित्य के विविध आयाम-
.0डॉ.गिरीश सोलंकी
4. आधुनिक परिवेश और नवलेखन -डॉ.शिव प्रसाद सिंह



♦ शोधार्थी
हिंदी विभाग, महात्मागांधी कॉलेज
केरल विश्व विद्यालय , तिरुवनंतपुरम
फोन: 9495448129

# महिला आत्मकथाएँः शोषण से लेकर शाक्तीकरण तक

• अनु. बि. एस

हिंदी साहित्य क्षेत्र में आत्मकथा साहित्य का एक विशिष्ट स्थान है। आत्मभिव्यक्ति की अदम्य आकांक्षा आदिकाल से ही मनुष्य में मौजूद है। साहित्य और कला के सभी रूपों में हमें इस अभिव्यक्ति की आकांक्षा देखने को मिलती है। लेकिन साहित्य में इस अभिव्यक्ति की व्यंजना अधिक मात्रा में हुई है। फलतः आत्मकथा जैसी एक नयी विधा की शुरुआत भी हुई। खुद लिखी हुई अपनी कहानी ही 'आत्मकथा' है।

अन्य साहित्य विधाओं के समान हिंदी आत्मकथा साहित्य की भी शुरुआत सन् साठ के बाद ही हुई। नारी जीवन को तथा नारी से संबंधित समस्याओं को केन्द्र में रखकर महिलाओं द्वारा लिखे गये साहित्य अत्यंत जीवन्त रहते हैं, क्योंकि भोगे हुए यथार्थ का चित्रण इनमें है। डॉ. सुमन राजे ने अपनी पुस्तक 'हिंदी साहित्य का आधा इतिहास' में बताया है कि "आत्मकथा और समीक्षा का क्षेत्र भी लगभग सूना ही पड़ा है। महिलाओं की आत्मकथाओं का हिंदी में अभाव अब तो एक मुद्दा बन गया है।" लेकिन आज इस शिकायत को कोई स्थान नही है। हिंदी लेखिकायें अपनी कहानी बताने के लिए सक्षम होकर आगे आयी हैं। इसलिए ही हिंदी साहित्य क्षेत्र में महिला आत्मकथाओं का महत्वपूर्ण स्थान है। लेखिकाएँ अपनी कहानी लिखने के साथ ही देशकाल-वातावरण, स्त्री के व्यक्तित्व के विभिन्न पक्ष, किन-किन परिस्थितियों से उन्हें लड़नी पड़ती है, उनकी संवेदनायें, उनका जीवन कहाँ से कहाँ तक आदि सभी का वर्णन करती हैं। लेखिकाओं ने अपने व्यक्तित्व का परिचय देने के साथ ही पितृसत्तात्मक समाज ने नारी पर किए अत्याचार, पति की खलनायकी भूमिका, विवाह संस्था ही कुरीतियों, आर्थिक विषमताओं आदि का विवरण करके समकालीन समाज की हलचलों पर भी अपनी लेखनी चलायी है। इसके उत्तम उदाहरण हैं प्रभा खेतान का 'अन्या से अनन्या', मन्नू भण्डारी का 'एक कहानी यह भी', कौसल्या बैसंत्री का 'दोहरा अभिशाप' आदि। इन आत्मकथाओं को पढ़ने से यह बात ध्यान में आती है कि स्त्री जितनी ऊँचा पद अलंकृत करती हो, चाहे वह लेखिका हो या अन्य हो, वह शोषण से मुक्त नहीं है।

प्रभा खेतान पितृसत्तात्मक पारिवारिक व्यवस्था के लिंगभेद पर आधारित नियमों से पूरित पुरुष आधिपत्य का शिकार बनी है। आर्थिक दृष्टि से संपन्न परिवार में जन्म लेने पर भी बचपन से ही प्रभा जी को शोषण का शिकार बनना पड़ा। प्रभा जी देखने में काली थी, स्मार्ट नहीं थी और देखने में उतना सुंदर भी नहीं थी। इन्हीं कारणों से अपने परिवार के सदस्य तथा रिश्तेदारों से उन्हें उपेक्षा मिली थी। प्रभा जी कहती हैं कि -"मैं उपेक्षिता थी, आत्मसम्मान की कमी ने मेरा ज़िन्दगी भर पीछा किया। भला नीची हैसियत के लोगों की प्यार भरी तारिफ़ों का, उन कमज़ोर रायों का मेरी ज़िन्दगी में

क्या मायने था। माँ ने प्यार नहीं किया। यह तो समझ रही थी क्योंकि मैं हरी काली। माँ की तरह गोरी नहीं।" अपनी माँ तक प्रभा जी से अलग रहीं। अपने परिवार के सबों ने उनका शोषण किया। अपने को पूर्ण रूप से समर्पित करके प्रेम करनेवाले व्यक्ति आर्थिक, यौन सभी रूपों में उसका शोषण किया। ज़िन्दगी की इन क्रूरताओं का सामना करके अपने अस्तित्व को बनाये रखने और एक खास पहचान बनाने की कोशिश वे निरंतर करती रहीं और सफलता भी पाई। सच में अतमकथा का शीर्षक जैसा उनका जीवन एक 'अन्या से अनन्या' बनने की कोशिश ही है।

कृष्णा अग्निहोत्री सामंती मनोवृत्तिवाले स्वार्थ एवं अहंग्रस्त पति से कष्ट पाती हैं। कृष्णा जी का वैवाहिक जीवन बहुत ही कष्टपूर्ण रहा, लेकिन लेखिका अपने अनुभवों से सशक्त बन जाती हैं। अत्याचारों को तोड़ने में वे सफल बन जाती हैं। अपनी आत्मकथाएँ, 'लगता नहीं है दिल मेरा', 'और-और औरत' इसका सफल नमूना है।

मन्नू भंडारी और राजेन्द्र यादव का प्रेम विवाह था। लेकिन उनका दांपत्य तो संतोषपूर्ण नहीं रहा। अपने असफल दाम्पत्य जीवन का वर्णन मन्नू जी अपनी आत्मकथा 'एक कहानी यह भी' में बताती हैं। अपने असफल दांपत्य जीवन से बाहर निकलने की कोशिश मन्नू जी अक्सर करती रहती हैं। लेकिन एक माँ होने के नाते वे सब कुछ सहन करती हैं। उनका सारा व्यक्तित्व 'माँ' एवं ममता के सामने चूर्ण हो जाता है। वैवाहिक जीवन के तीस साल बाद वे राजेन्द्र जी से तलाक लेकर शाक्तीकरण की राह पर थीं।

मैत्रेयी पुष्पा की आत्मकथायें 'कस्तूरी कुण्डल बसै' और 'गुड़िया भीतर गुड़िया' नारी विमर्श पर केन्द्रित हैं। पहले भाग में उन्होंने अपनी माँ की कष्टमय जीवनगाथा को बताने के साथ उनके बचपन से लेकर साहित्यिक जीवन तक के अनुभव को सच्चाई के साथ अंकित किया है। दूसरे भाग में वैवाहिक जीवन की त्रासदियों का उल्लेख किया है। उनके डॉक्टर पति अपने सभी कामों को नकारात्मक दृष्टि से देखते हैं और सदा उनके पथ पर बाधाएँ डालते हैं। लेखिका उनके प्रति आक्रोश करके बताती हैं कि अपनी नायिकाओं की तरह वे खुद भी पुरुष सत्ता की विद्रोहिणी हैं। इसी प्रकार सुशीला टाकभौरे तथा कौसल्या वैसंत्री दोनों शिक्षित होने के बावजूद भी उन्हें अपने पतियों की मारपीट भी झेलनी पड़ती है। कौसल्या जी का अभिशाप तो दोहरा है - एक ओर तो नारी होने का दूसरा तो दलित होने का। उनके पति गाँधीवादी थे। गाँधीवादी आंदोलनों के भागीदार थे। घर के बाहर एक गाँधीवादी और घर में अपनी पत्नी के सामने सामंतीपन का अमूर्त रूप। अपनी पत्नी को वे एक गुलाम मानते थे। इस गुलामी से बाहर निकलना कौसल्या जी के लिए थोड़ी मुश्किल की बात थी, लेकिन अंत में अपने अस्तित्व को बनाये रखने के लिए उन्हें सब कुछ छोड़ना पड़ा।

इस प्रकार अपने पर होनेवाले अत्याचारों के विरुद्ध आवाज़ उठाने की ताकत लेखिकाओं ने दिखाई और इसी बात को पाठकों के सामने अपनी रचनाओं, विशेषकार आत्मकथाओं द्वारा पेश करती हैं। आज नारी सभी क्षेत्रों में अपनी मुक्ति के लिए संघर्ष करती रहती है। यही संघर्ष उपर्युक्त सभी

आत्मकथाओं में हम देख सकते हैं। शोषण से शाक्तीकरण तक के मार्ग पर पहुँचना तो एक आसान बात नहीं है, खासकर एक स्त्री के लिए। क्यों कि पुरुषों की तुलना में स्त्री अनेक प्रकार के बंधनों से घेरी रहती है। सब कहीं समतुल्यता का स्वर गूँज रहा है। लेकिन सच्चाई तो यह है कि अपनी मुक्ति एवं तुल्यता के लिए नारी को संघर्ष करना ही पड़ता है।

इसी प्रकार कष्टतापूर्वक जीवन बिताने पर भी वे अपने ज़िन्दगी को कोसकर जीना नहीं चाहतीं। अपने प्रति होनेवाले अत्याचारों के विरुद्ध लड़के अपने अस्तित्व को बनाये रखने के लिए वे सदा तल्लीन रहती हैं। नारी परिवार में, समाज में सब कहीं निजी 'स्पेस' चाहती हैं। वे अपनी रचनाओं के माध्यम से सभी नारियों को इसी प्रकार प्रबल बनाने का पक्ष लेती हैं। इसके लिए इन लेखिकाओं की आत्मकथाएँ जो भूमिका निभाती हैं या निभा रही हैं, उसका दिग्दर्शन है वर्तमान समाज की नारियों के बदलते स्वरूप।

**सहायक ग्रंथ**:


हिन्दी महिला आत्मकथाकार - डॉ. संजय ढोडरे

हिन्दी का आत्मकथा साहित्य -सं. डॉ. प्रतिभा येरेकार तथा डॉ. प्रकाश शिंदे

हिन्दी आत्मकथा - प्रो. शिवाजी देवरे

अन्या से अनन्या - प्रभा खेतान

एक कहानी यह भी - मन्नू भण्डारी



♦ शोधार्थी

यूनिर्वेसिटि कॉलेज

तिरुवनन्तपुरम ।

फोन: 8943278980


# श्रद्धांजलियाँ

## दूधनाथ सिंह (1936-2018)

विख्यात हिंदी लेखक दूधनाथ सिंह का जन्म उत्तरप्रदेश के बलिया में सोबंथा गाँव में 17 अक्तूबर 1936 को हुआ । उनकी पहली कहानी 'तुमने तो कुछ नहीं कहा' धर्मयुग में छपी थी । उस समय 22 साल के थे । फिर विविध साहित्य विधाओं में तूलिका चलायी । चर्चित उपन्यास हैं 'नमो अंधकारम्', 'आखिरी कलाम', 'निष्कासन' आदि । कविता संग्रह हैं 'एक अनाम कवि की कविताएँ', 'अगली शताब्दी के नाम', 'एक और भी आदमी है', 'युवा खुशबू', 'तुम्हारे लिए' आदि । 'सुरंग से लौटते हुए' लंबी कविता है । कहानी संग्रह हैं -'सपाट चेहरेवाला आदमी', 'सुखांत', 'प्रेमकथा का अंत न कोई', 'माई का शोक गीत', 'धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे', 'जलमुर्गियों का शिकार', 'तू फू' आदि । उन्होंने अपनी कथा रचनाओं में साठोत्तर भारत की पारिवारिक, आर्थिक, सामाजिक एवं मानसिक विसंगतियों का चित्रण किया। 'यमगाथा' उनका चर्चित नाटक है ।

आलोचना, संस्मरण, साक्षात्कार , संपादन जैसे क्षेत्रों में उन्होंने अपनी अमिट छाप छोड़ी है । समर्पित हिंदी साहित्य सेवी स्वर्गीय दूधनाथ सिंह को प्राप्त सम्मान हैं- भारत भारती सम्मान, भारतेन्दु सम्मान, शरदजोशी स्मृति सम्मान, कथाक्रम सम्मान, साहित्य भूषण सम्मान आदि । 11 जनवरी 2018 को इलाहबाद में दूधनाथ सिंह जी का निधन हुआ ।

# हिंदी निबंध साहित्य का समकालीन परिदृश्य

• महिमा.एम

निबंध गद्य साहित्य की वह विधा है जिसमें लेखक किसी विषय या वस्तु के संबंध में निजी विचारों का प्रतिपादन साहित्यिक शैली में करता है। यह प्रौढ गद्य लेखन का प्रतीक है। निबन्ध का शाब्दिक अर्थ है - गठा हुआ, कसा हुआ या बाँधा हुआ। अंग्रेज़ी में इसे 'एसे' कहते हैं। इसका जन्मदाता फ्राँसीसी साहित्य प्रेमी माइकेल मौण्टेन थे, जिन्होंने 18 वीं शती में 'एसेइस' नाम से निबंधों का एक संग्रह प्रकाशित किया था। उसी के प्रभाव से हिन्दी में निबंध साहित्य का उद्भव हुआ। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र को हिन्दी का प्रथम निबंधकार माना जाता है। निबंध की विकास-यात्रा को चार चरणों में बाँटा जा सकता है। वे हैं-

1.भारतेन्दु युग (प्रथम उत्थानकाल)-1870 -1900 ई

2.द्विवेदी युग (द्वितीय उत्थानकाल)-1900 -1920 ई.

3.शुक्ल युग (तृतीय उत्थानकाल)-1920 -1940 ई

4.शुक्लोत्तर युग (चतुर्थ उत्थानकाल)-1940 ई से वर्तमान समय तक।

शुक्लोत्तर युगीन निबंधकारों में प्रमुख हैं- आचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी, डॉ. नगेन्द्र, शांतिप्रिय द्विवेदी, रामविलास शर्मा, प्रभाकर माचवे, अज्ञेय, विवेकी राय, कुबेरनाथ राय, विद्यानिवास मिश्र, जैनेन्द्र कुमार आदि। इनमें आचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी का शीर्षस्थ स्थान है, जिन्होंने रामचन्द्र शुक्ल की परंपरा के अध्ययन और चिंतन पक्ष को आगे बढ़ाने का स्तुत्य प्रयास किया है। उनके द्वारा लिखे गये ललित निबंध ही उनकी ख्याति के आधार हैं। अशोक के फूल, कल्पलता, मध्यकालीन धर्म साधना, विचार और वितर्क, विचार प्रवाह, कुटज, साहित्य सहचर, आलोकपर्व आदि उनके निबंध संग्रह हैं। उन्होंने व्यक्तिपरक और विषय-प्रधान दोनों ही प्रकार के निबंध लिखे हैं। उन्होंने साधारण-से साधारण विषय से लेकर गंभीर विषयों तक को अपने निबंध का विषय बनाया। व्यक्तिगत बात की भी वे विषयगत व्याख्या देते हैं। मानवतावादी दृष्टिकोण, भारतीय संस्कृति के प्रति विशेष लगाव, बुद्धि एवं हृदय पक्ष का संगम आदि उनके निबंधों की खासियत है।

स्वातंत्र्योत्तर निबंध साहित्य के एक प्रमुख हस्ताक्षर हैं डॉ. नगेन्द्र। वे निबंध को एक कलात्मक रचना मानते हैं। 'मेरी सहित्यिक मान्यताएं' नामक निबंध में उन्होंने साहित्य संबंधी अपने विचारों को प्रस्तुत किया है। उन्होंने अपने निबंधों में संवाद शैली, नाटकीय शैली, भावात्मक शैली, प्रश्नोत्तर शैली, व्यंग्य शैली, आत्मकथात्मक शैली, पत्रात्मक शैली आदि विभिन्न शैलियों का प्रयोग किया है। उनके द्वारा लिखित निबंध संग्रहों में उल्लेखनीय हैं- 'विचार और अनुभूति', 'विचार और विश्लेषण', 'विचार और विवेचन', 'अनुसन्धान और आलोचना', 'आलोचक की आस्था', 'आस्था के चरण' आदि।

समकालीन निबंधकारों में श्री विद्यानिवास मिश्र जी का महत्वपूर्ण स्थान है। उन्होंने समसामयिक बहुविध समस्याओं को लेकर कई उत्कृष्ट निबंध

लिखे। कंटीले तारों के आर-पार, छितवन की छांह, तुम चन्दन हम पानी, आंगन का पंछी और बनजारा मन, कदंब की फूली डाल, अंगद की नियति, गाँव का मन आदि उनके निबंध संग्रह हैं। अपने निबंधों द्वारा कहीं वे चीनी सरकार द्वारा गौरेयों के विनाश के अभियान पर खिल्ली उड़ाते हैं तो कहीं भारत के शासन तंत्र पर व्यंग्य करते हैं। विश्वविद्यालयों का प्रशासन, भारत की विकास योजना आदि अनेक विषयों पर उन्होंने अपनी लेखनी चलायी। व्यंग्य-विनोद के साथ-साथ ये निबंध भारतीय जन जीवन की विषमताओं और विसंगतियों को रेखांकित करते हैं। तत्कालीन राजनीति और विसंगतियों को रेखांकित करते हैं। तत्कालीन राजनीति और शासन को लेकर लिखा गया उनका निबंध है - 'वसंत आ गया है, पर कोई उत्कंठा नहीं'। आधुनिक हिन्दी निबंधों का एक मौलिक प्रतिमान है 'छितवन की छांह' जिसके प्रसंग भारतीय जनजीवन से जुड़े हुए हैं। उनके अधिकांश निबंध भावात्मक कहने योग्य हैं।

लोकजीवन और लोक संस्कृति को लेकर निबंध रचनेवालों में अग्रणी हैं डॉ. विवेकी रॉय। गाँव की आर्थिक, राजनीतिक तथा सामाजिक विसंगतियों का चित्रण उनके निबंधों का समकालीन होने की गवाही देते हैं। 'जुलूस रुका है' निबंध में उन्होंने स्वातंत्र्योत्तर ग्रामीण जीवन और स्वार्थी नेताओं का चित्रण किया है। वे कहते हैं कि आज़ादी के इतने दिनों बाद भी विकास के चरण गाँवों में नहीं पहूँचे हैं।

साठोत्तर हिन्दी निबन्धकारों में श्री कुबेरनाथ राय का नाम बड़े आदर के साथ लिया जाता है। उनके ललित निबन्धों के मुख्य प्रतिपाद्य हैं लोकजीवन, लोकसंस्कृति, आर्य संस्कृति आदि। निषाद एवं किरात संस्कृति के लोगों को निकट से जानने के कारण उनकी समस्याओं, रहन-सहन, रीति-रिवाज़ आदि पर उन्होंने कई उत्कृष्ट निबंध लिखे। 'निषाद बाँसुरी', 'विषादयोग' और 'किरात नदी में चन्द्रमधु' इस दृष्टि से महत्वपूर्ण रचनाएँ हैं। देश की वर्तमान स्थिति पर लेखकीय चिन्ता प्रकट करनेवाला निबन्ध है 'जंबुक'। 'विषादयोग' में उनके युगबोध और समसामयिकता नज़र आती हैं। मल्लाहों का जीवन अंकित करनेवाले उनके निबंध हैं- 'पाहन नौका', 'सैकत अभिसार' और 'निषाद बांसुरी'। उन्होंने रामकथा और गाँधीवाद को समकालीन संदर्भों से जोड़कर प्रस्तुत किया है।

वर्तमान युग में विभिन्न विषयों को लेकर वर्णनात्मक, विवरणात्मक, विचारात्मक, भावात्मक, आत्मपरक आदि विभिन्न प्रकार के निबंध लिखे जाते हैं। निर्मल वर्मा का 'आदि अंत और आरंभ , जयदेव तनेजा का 'रंग- साक्षात्कार', राजमल बोरा का 'भूले बिसरे प्रसंग', रामदरश मिश्र का 'अपने- अपने रास्ते', देवेन्द्र इस्सर का 'कोई आवाज़ गुम नहीं होती' आदि वर्तमान युग के महत्वपूर्ण निबंध संग्रह हैं। विभिन्न समसामयिक विषयों को लेकर अनेक निबंध आज लिखे जाते हैं । आचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी और रामचन्द्र शुक्ल जैसे विलक्षण प्रतिभा से युक्त निबंधकार की परंपरा को आगे बढ़ानेवाले अनेक निबंधकार हिन्दी निबंध साहित्य के आकाश में उदय हुए हैं।

♦ शोध छात्रा,
यूनिवर्सिटी कॉलेज, तिरुवनंतपुरम
फोन: 9746975187

# प्रकृति की ओर एक नज़र, शिवानी के उपन्यासों के विशेष संदर्भ में

• प्रियंका.आर

शिवानी हिंदी साहित्य जगत् की बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न साहित्यकार हैं। शिवानी सिर्फ एक उपन्यासकार मात्र नहीं, बल्कि उन्होंने कहानी, निबन्ध, रेखाचित्र तथा बाल साहित्य में भी अपनी लेखकीय क्षमता दिखायी है। शिवानी एक ऐसी लेखिका हैं जो अपने समाज ,संस्कृति एवं प्रकृति के प्रति प्रभावित रहती हैं। उनकी हर एक रचनाओं में प्रकृति-रमणीयता का चित्र अंकित है।

जिस प्रकार सुमित्रानन्दन पन्त को कविता लिखने की प्रेरणा अपनी जन्म भूमि देती रही उसी प्रकार शिवानी केलिए कुमाऊ की प्रकृति की अव्यक्त सुन्दरता ने उनकी कलम केलिए स्याही भरा दी। कुमाऊ का नामकरण विष्णु भगवान के कूर्मावतार के नाम पर हुआ है। कुमाऊनिवासी परम्परागत अनुष्ठानों को माननेवाले हैं। प्रकृति को माँ की तरह पालन-पोषण करके पूजा करनेवाले है कुमाऊवासी। यहाँ पीपल, बरगद, आंवला तथा तुलसी की पूजा की जाती है और वृक्षों को काटना भी अपराध समझा जाता है।

कुमाऊ सांस्कृतिक दृष्टि से मध्य हिमालयी लोक संस्कृति का एक अंग है। डॉ डी.डी.शर्मा के अनुसार -"सम्पूर्ण मध्य हिमालयी संस्कृति समान भौगोलिक,सामजिक,धार्मिक स्थितियों और प्रवृतियों तथा आव्रजन्य तथा आप्रवास की समान स्थितियों के कारण लगभग एक सी हो रही है।"[1]

लेखिका की हर एक रचना कुमाऊ निवासी की तरह हिमालय की असीम छटा से ओतप्रोत है। पर्वतीय श्रृंखलायें, मौसम में आया बदलाव, चिड़ियों का चहचहाना तथा मंदिरों का वर्णन आदि उनकी लेखनी की विशेषतायें हैं।

शिवानी अपनी जन्म भूमि को अपनी रचनाओं के माध्यम से प्रदर्शित करना चाहती हैं। उनकी रचनाओं में दृष्टिगत प्राकृतिक सुन्दरता नितांत यथार्थ एवं आँखों देखी है। इसमें कल्पना का पुट नहीं है। आम कुमाऊ वासी की तरह हिमालय शिवानी का श्रद्धा केंद रहा है। उनके विचार में -" हिमालय संत है। भाग्यशालियों को ही इनके दर्शन मिलते हैं। खिली धुप में कुमाऊ एवं हिमालय की अनुपम छटा मुग्ध बना देती है। पहाड़ी वनस्पतियों से परिपूर्ण शिलाखंडों पर धूप आँख मिचौनी कर रही थी, कभी सहसा घिर आया मेघ खंड सूर्य को ढक लेता है और कभी स्वयं उसे मुक्त कर, उजली धूप से पूरे वन खंड को उजला कर छोड़ जाता, उपत्यकाओ में प्रहरी से ख़डे चीड़, देवतारु, बांज बुरुश ,मोज कैल ,खरसू और शाल के भव्य वृक्ष कंधे से कंधा मिलाए परेड कर रहे फौजियों से ही चलायमान बस के साथ-साथ चल रहे थे।" [2]

'मायापुरी' हों या 'चौदहफेरे', 'कालिंदी' हों या 'भैरवी' हर एक रचना कुमाऊके सौंदर्य से ओतप्रोत हैं।

पर्वतीय छटा से भरा एक उपन्यास है 'चौदहफेरे'। इसकी नायिका अहल्या शहरी वातावरण में पली बड़ी है। एक शादी में भाग लेने केलिए वह पिता के साथ कुमाऊ में आ जाती है। वहाँ की रूप-छटा अहल्या को मंत्र मुक्त कर देती है।"चारों ओर पर्वत मालाओं से घिरी हुई होने पर भी वह एक विचित्र-सी घाटी थी जिसके और छोर पहाड़ी पारिजात, मदार और कुंद पुष्पों से ऐसे सुवासित हो रहे थे जैसे कहीं चन्दन की ढेर साड़ी धूप बत्तियाँ जल रही हैं। सीढ़ी से बने खेतो पर नई फसल का तारुण्य गदरा रहा था। छोटी-छोटी पथरीली छतो पर सोलह गजी काले लहंगे और रंग बिरंगे कपड़े सूख रहे थे। कही स्तूपाकार सूखी सुनहरी घास के गटठो पर पडती अस्त्म्गामी सूर्य की मंद रश्मियाँ उन्हें तापे सोना सा चमका रही थीं। आस पास की अलाओ से उठते गोबर के धुए से मिली भीगी मिट्टी की सोधी सुगंध से कुमाऊ की धरती ने प्रवासी अहल्या का स्वागत कर वरण किया।" [3]

कुमाऊ वासी प्रकृति के सब फल मूलादि का संरक्षण करना अपना कर्तव्य समझते हैं। शिवानी ने अपने उपन्यासों में कुमाऊ में देखी जानेवाली पहाड़ी चिड़ियाँ जैसे- जुहो, सिटौल, तितुर तथा वृक्षों में अनार अखरोट ,खुबानी नाशपाती, कल्पतरु तथा रीठा, हरड, पिपरमेट, आंवला, गुल्वन्फ्शा, पषाणभेद जैसी कुमाऊ प्रकृति में उपलब्ध जड़ीबूटियों का उल्लेख 'कालिंदी' नामक उपन्यास में किया है "यहाँ भला कोई बीमार पड़ सकता है ? एक दयार बांजे की हवा ही तो इनकी दवा है और यह अद्भुत वन खंड है इनका क्लीनिक।" [4]

पहाड़ जितना सुंदर है उतना ही भयावह और भीषण भी है। जाड़े और वर्षा की ऋतु अत्यंत विनाशकारी होती है। 'भैरवी' उपन्यास में वर्षा के भीषण दृश्य का अंकन किया गया है। "झार-झार पगार के कठोर ढालू छत से लुढ़कते-लुढ़कते धरा पर कत्थाई चादर-सी बिछा गयी और गुलाबी पुष्पों से लदा पय्या के वृक्ष पल भर में अंग झाड़ पुष्पों से गदराई यौवन को खोकर नीरस तरुवर विलसती पुरत बन गया।" [5]

शिवानी अपने उपन्यास साहित्य में प्रकृति के सुंदर, कठोर, आकर्षक एवं भयावह रूपों के चित्र खीचे हैं। उनकी रचनाएँ पढ़कर ऐसा लगता है कि हम उन स्थानों में भ्रमण कर रहे हैं। प्रकृति हमारी माँ है, उसका संरक्ष्ण हमारा कर्तव्य है। आज का समाज सिर्फ अपनेलिए जीता है। दूसरो के दुःख और दर्द पर उसकी दृष्टि नही जाती। उत्तराधुनिक समाज इस बात से अनभिज्ञ है कि वे लोग प्राकृतिक वस्तुओं का शोषण करके अपना ही नाश करने पर तुले हैं। विकास की ओर अग्रसर होनेवाले मानव के मन सिर्फ इच्छाओं तथा आकांक्षाओ से भरे हैं। लेकिन वे यह बात भूल जाते हैं कि सब इच्छाओं की सार्थकता प्रकृति पर निर्भर है।

**संदर्भ**


1 डॉ डी.डी.शर्मा, उत्तराखंड संस्कृति अंक3,पृ-115, आराधना ब्रदेर्स-प्रकाशन एवं वितरक।

2 शिवानी ,चौदहफेरे (भूमिका), पृ-113, राधाकृष्ण प्रकाशन।

3 शिवानी, चौदहफेरे, पृ-92 वही

4 शिवानी, कालिंदी, पृ-155 वही

5 शिवानी, भैरवी, पृ-68 वही



◆ शोधार्थी

हिंदी विभाग, महात्मागांधी कॉलेज

केरल विश्व विद्यालय,

तिरुवनंतपुरम

फोन:9249776861

# समकालीन दलित साहित्य की दशा और दिशा

• रीष्मा. एल. एस

'समकालीन साहित्य' समाज के परिवर्तित होते जीवन यथार्थ को अति संवेदनशीलता के साथ आभिव्यक्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। इसलिए ही साहित्य को 'समाज का दर्पण' कहा गया है। हमारी भारतीय समाजिक व्यवस्था समाज में उच्च वर्ग निम्न वर्ग, अमीर- गरीब, स्त्री - पुरुष, बहुसंख्यक - अल्पसंख्यक आदि भेदभाव से ही चल रही है। यह हमारी भारतीय समाज की पुरानी परंपरा है। सूचना क्रांति के इस युग में इसमें कोई परिवर्तन भी नहीं हुआ है। आज भी परंपरा का पालन करके हमारे समाज में कई वर्ग हाशिए में हैं, जैसे दलित, स्त्री, आदिवासी, हिजडा आदि। इस हाशिएकृत समाज को मुख्यधारा में लाने केलिए अनेक प्रयास भी चल रहे हैं। इसकेलिए हमारे साहित्य जगत का योगदान महत्वपूर्ण है।

सदियों से शोषित, पीड़ित रहे दलितों का चित्रण करनेवाला 'दलित साहित्य' दलित समाज में उनकी मुक्ति का द्वार खोलता है। भारत धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र है, ऐसा ही कहा गया है। लेकिन हमारा भारतीय समाज धर्म सापेक्ष है, धर्म के नाम पर समाज में वर्ण और वर्ग व्यवस्था का संघर्ष अबी भी चल रहा है। ऐसी अवस्था में 'दलित साहित्य' पर चर्चा अनिवार्य है।

चातुरवर्ण व्यवस्था का पालन करनेवाले हमारे भारतीय समाज में शूद्र या दलित को निम्न स्थान है। हमारे वेदों और उपनिषदों में इसका उल्लेख मिलता है। इसी प्रकार प्राचीन ग्रंथ 'मनुस्मृति' में भी दलित वर्ग का उल्लेख किया गया है। ऋगवेद के पुरुषसूक्त में इसका स्पष्ट उल्लेख मिलता है-

"ब्राहमणोऽस्य मुखमासीद् बाहु राजन्यः कृतः।
उरू तदस्य यद्वैश्यः पदभ्यां शूद्रो अजायते।।" [1]

इसका मतलब यह है कि ईश्वर के मुख से ब्राह्मण, भुजाओं से क्षत्रीय, जंघा से वैश्य और उसके पैर से शूद्र उत्पन्न हुए हैं। चातुरवर्ण व्यवस्था ऋगवेद काल से लेकर आज तक किसी न किसी रूप में विद्यमान रही है।

पहले मराठी साहित्य से प्रभावित होकर ही हिंदी में देलित साहित्य का उदय हुआ। इसलिए ही दलित साहित्य का आरंभ 'महाराष्ट' में हुआ। साहित्य का उद्देश्य 'समाज - कल्याण' है। इसलिए साहित्यकार साहित्य रचना समाज की भलाई केलिए करते है। दलितों के उत्थान केलिए दलित साहित्यकारों का दायित्व महत्वपूर्ण है।

मध्यकाल से लेकर ही दलित साहित्य हिंदी में मिलता है। मध्यकालीन संत कवि कबीर, नानाक और

रैदास ने दलितों के उद्धाार केलिए कठिन परिश्रम किए। कबीरदास रूढ़ियों के कट्टर विरोधी थे। उन्होंने जातिभेद, धर्म -भेद, बाहयाडंबर का खण्डन करके जाति के महत्व को ही मिटा दिया। संत गुरु रैदास स्वयं दलित जाति के चमार थे। रैदास ने अपने सशक्त व्यक्तित्व एंव कृतित्व से तत्कालीन दलित वर्ग में नवीन चेतना जागृत कर उसकी हीन भावना दूर की। इसके बाद दलित जागरण केलिए अनेक सामाजिक संस्थाएँ, महात्मागाँधी, अंबेडकर, ज्योतिबा फूले जैसे आदर्श पुरुषों से प्रेरणा पाकर हिंदी में दलित साहित्य की नींव डाली।

सन् 1972 में श्री कमलेश्वर के संपादकत्व में 'सारिका' के 'दलित विशेषांक', फिर डॉ . महीपसिंह के संपादकत्व 'संचेतना' के 'दलित साहित्य विशेषांक' ने देलित साहित्य का स्वर हिंदी जगत में पहुँचाया। नवें दशक में राजेंद्र यादव ने 'हंस' में दलित काव्य और कहानियाँ प्रकाशित कर दलित साहित्य को प्रोत्साहन दिया। सर्वप्रथम 'हंस' पत्रिका में दलित विशंषांक प्रकाशित हुआ था। दलित साहित्य के प्रचार- प्रसार और प्रोत्साहन में रमणिका गुप्ता ने सफल प्रयास किया है, जिन्होंने अपनी पत्रिका 'युद्धरत आम आदमी' में 'दलित चेतनाः कविता', 'दूसरी दुनिया का यथार्थ' (कहानियाँ), 'दलित सोच' और 'दलित चेतना' पर विशेषांक निकाले। इससे कविता कहानी, उपन्यास, नाटक, आत्मकथा आदि विधाओं में दलित साहित्य पर रचना-कार्य शुरू हो गया।

वास्तविक रूप से हिंदी में दलित साहित्य का प्रारंभ 1914 में 'सरस्वती' पत्रिका में छपी हीरा डोम की 'एक अछूत की शिकायत' कविता से माना जाता है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में जो दलित कविता लिखी जा रही है, वह एक प्रकार से विद्रोह की कविता है। पुरानी रूढ़िवादी परंपराओं, नैतिकताओं और जितनी भी आस्थाएँ हैं उनके प्रति यह कविता विद्रोह करती हुई प्रतीत होती है। मलखान सिंह की कविता 'सुनो ब्राह्मण' में कहा है कि -

"तो सुनो वशिष्ठ
द्रोणाचार्य तुम भी सुनो
हम तुम से घृणा करते हैं
तुम्हारे अतीत
तुम्हारी आस्थाओं पर थूकते ह।" 2

इसके आलावा सोहनपाल सुमनाक्षर का कविता संग्रह 'अंधा समाज बहरे लोग', लाल चंद् राही का 'मूक नही मेरी कविताए', परुषोत्तम सत्यप्रेमी का 'द्वार पर दस्तक', श्यौराज सिंह बेचैन का 'नई फसल', ओमप्रकाश वाल्मीकि का 'सदियों का संताप' आदि काव्य संग्रहे दलित कविता का प्रतिनिधित्व करते है।

हिंदी कथा साहित्य में प्रेमचंद का आद्वितीय स्थान है। उनकी 'दूध का दाम', 'ठाकुर का कुआ', 'सद्गति', 'घासवाली'आदि कहानियों में दलितों की मानसिक तथा सामाजिक स्थितियों का चित्रण मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया गया है। 'गोदान', 'रंगभूमि', 'कर्मभूमि' आदि श्रेष्ठ उपन्यासों की रचना करके प्रेमचंद ने दलित मुक्ति का आह्वाान किया।

समकालीन हिंदी दलित कहानियाँ दलितों की पीड़ा तथा संघर्ष को व्यक्त करती हैं। मोहनदास नैमिशराय की कहानी 'हारे हुए लोग',दयानंद बटोही की 'सुरंग', राजकुमार सिंह की 'नंबर', बी. एल. नय्यर की 'चतुरी चमार की चाट' जयप्रकाश कर्दम की 'मुक्ति की तलाश' आदि कहानियाँ दलित समस्याओं को चित्रित करती हैं।

समकालीन हिंदी उपन्यासों में दलितों में चेतना जाग्रत करनेवाले उपन्यासों का चित्रण करके पाठकों का ध्यान आकर्षित किया है। जयप्रकाश कर्दम का उपन्यास 'छप्पर', मोहनदास नैमिशराय का 'मुक्तिपर्व', सत्यप्रकाश का 'जस तस भई सवेर', अमृतलाल नागर का 'नाच्यौ बहुत गोपाल', गिरिराज किशोर का 'परिशिष्ट' तथा जगदीशचंद्र का 'धरती धन न अपना' आदि उपन्यासों में दलितों के विभिन्न पक्षों को पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत किया गया है।

दलित आत्मकथा दलित साहित्यधारा की सशक्त विधा है। दलित आत्मकथाओं में ओमप्रकाश वाल्मीकि की 'जूठन', मोहनदास नैमिशराय की 'अपने अपने - पिंजर', सूरजपाल चौहान की 'तिरस्कृत', कौशल्या बैसंदी की 'दोहरा अभिशाप' आदि प्रमुख हैं।

दलितों की दर्द भरी ज़िंदगी को मंच पर प्रस्तुत करके 'दलित नाटक' भी प्रकाशित हुए। एन. आर. सागर का 'अंतिम अवरोध', कर्मशील भारती का 'फांसी', मनोज कुमार केन का 'संवाद के पीछे', मोहनदास नैमिशाराय का 'हैलो कॉमरेड' आदि समकालीन बहुचर्चित नाटक हैं।

नाटक से लेकर आज जीवनी, निबंध, आलोचना, पत्र लेखन आदि शाखाओं में दलित सोच एंव विचार प्रकट होते हैं। पहले दलित द्वारा लिखे गये साहित्य को 'दलित साहित्य' कहा गया, लेकिन आज गैर दलित लेखकों का आगमन भी हुआ। दलित साहित्यकार अपने भोगे हुए यथार्थ से दलित लेखन करते हैं, तो गैर दलित लेखक दलितों से सहानुभूति रखकर साहित्य-रचना करते हैं। आज 'दलित साहित्य' का क्षेत्र काफ़ी विस्तृत हुआ है।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि आज 'दलित साहित्य' प्रगति की ओर जा रहा है। 'दलित साहित्य' मानव के अस्तित्व को प्रतिष्ठित करने के साथ - साथ देश, धर्म, जाति से ऊपर उठकर उसको महानता प्रदान करता है। आधुनिक दलित साहित्य 'दलित चेतना' का प्रतिनिधित्व करता है। अपने हक और अधिकारों के प्रति संघर्ष करने का आह्वान करता है। दलित साहित्य का उद्देश्य सोये हुए दलित समाज को जागने तथा उठने केलिए प्रेरित करना है। दलित जागरण के लिए अंबेडकर का मूल मंत्र - 'शिक्षित करो, संगठित हो और संघर्ष करो' को अपनाकर दलित उद्धार केलिए प्रयत्न करना है। समाज में परिवर्तन एंव कल्याण शिक्षा के द्वारा ही होता है। शिक्षित समाज जाग्रत होकर संगठित करके अपने अधिकारों केलिए संघर्ष करता है। सामाजिक भेदभाव को मिटाकर समाज में एकता लाने केलिए दलित साहित्य महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। व्यक्ति को धर्म के आधार पर नहीं, कर्म के आधार पर ही अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करनी है। दलित समाज में

शिक्षा के अभाव के कारण ही उन्हें सभी क्षेत्रों में हाशिए में रखा जाता है। उन्हें निरक्षर होने के कारण अर्थ, मान-सम्मान, अधिकार कुछ भी उपलब्ध नहीं होता है। उन्हें सफल रूप से शिक्षा दे तो आरक्षण का लाभ उठाकर उच्च पद पर आसीन करने केलिए सहायता मिलगी। दलित साहित्य में विद्रोह प्रकट करके शिक्षा के महत्व पर ज़ोर डाला गया है। परंपरागत दाँचे को बदलने केलिए दलित साहित्यकार बाबासाहब अंबेडकर के आदर्शां - 'शिक्षा', 'संगठन' और 'संघष' - की महत्ता पर बल दिया है। इस प्रकार दलित साहित्यकार सदियों से अमानवीय व्यवस्था से दलित के शोषण, उत्पीड़न के प्रति मुक्ति का एहसास कर सामाजिक बदलाव के प्रति नई आशावादी नज़र उत्पन्न करके दलित साहित्य को नई दिशा दी है।

**संदर्भ**

(1) दसवें दशक के हिंदी उपन्यासों में दलित चेतना - वसाणी कृष्णावंती. पी - पृ.सं- 18

(2) दलित चेतना और भारतीय समाज - डॉ.मौहम्मद अबीर उद्दीन - पृ.सं- 64

**सहायक ग्रंथ**

1.दलित विमर्श - डॉ. नरसिंहदास वणकर- चिंतन प्रकाशन - 2007

2.दलित चितंन की दिशाएँ - डॉ. सुरेश चंदू- क्वलिटी बुक्स पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स - 2005

3.दलित चेतना और भारतीय समाज - डॉ. मौहम्मद अबीर उद्दीन - अंकित पष्यिकेशत्स- 2011

4.दलित साहित्य में प्रमुख विधाएँ - माता प्रसाद - आकाश पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स - 2004

5.दसवें दशक के हिंदी उपन्यासों में दलित चेतना - वसाणी कृष्णावंती. पी - जागृति प्रकाशन-2010

♦ शोधछात्रा
हिंदी विभाग,
यूनिवार्सिटी कॉलेज,
तिरुवनंतपुरम।
फोन : 8129038415

---

# सही उत्तर चुनें

**(पृ.सं.16 के आगे)**

6. श्रीकांतवर्मा का कविता संकलन कौन-सा है?

अ.सीढियाँ शुरू हो गयी हैं

आ. वे कवि हैं

इ.सुनाये न बने

ई. जलसा घर

7. कौन खुद को 'कविता का निर्लज्ज प्रशंसक' कहते हैं?

अ.केदारनाथ सिंह

आ.विष्णुचंद्र शर्मा

इ. अशोक वाजपेयी

ई.त्रिलोचन

8. मंगलेश डबराल का कविता संग्रह कौन-सा है?

अ.घर का रास्ता

आ. दुःख चिट्ठी रसा है

इ. नक्षत्रहीन समय से

ई. दुनिया का मतलब

9.'साए में धूप' किस विधा की रचना है?

अ.कहानी

आ. गज़ल

इ. प्रबंध काव्य

ई.नाटक

10. शमशेर का पूरा नाम क्या है?

अ.शमशेर कुमार

आ. शमशेर मुहम्मद

इ. शमशेर बहादुर सिंह

ई. शमशेर जोशी

11.'कविता के तीन दरवाज़े' का रचनाकार कौन है?

अ. अशोक वाजपेयी

आ.अज्ञेय

इ.मुक्तिन्द्रेध

ई. शमशेर

12.ज्ञानेन्द्रपति का साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त कविता संग्रह कौन-सा है?

अ.अकेलापन

आ.संशयात्मा

इ.भारी हवा

ई.आइना

13. 'मुक्तिबोध पीड़ा के कवि हैं, जिसे इस संसार में करुणा की तलाश है।' - किसका कथन है?

अ. अशोक वाजपेयी

आ.राजेश जोशी

इ. कुंवर नारायण

ई. लीलाधर जगूड़ी

**सही उत्तर**

1. इ 2.अ 3. आ 4. ई 5. अ
6. ई 7.इ 8. अ 9.आ 10.इ
11.अ 12. आ 13. अ

# सूर्यबाला के कथासाहित्य में बदलतेनैतिक मूल्य

♦ पंचमी.आर

हिन्दी में 'मोरौलिटी' केलिए 'नैतिकता' या 'नैतिक मूल्य' शब्द का प्रयोग किया जाता है। 'नैतिकता' का मतलब है सदाचार। नैतिक मूल्य हमें उचित-अनुचित व्यवहार का ज्ञान कराते हैं। सदियों से भारत की संस्कृति नैतिक मूल्यों एवं गुणों से संपन्न है। हमारी सभ्य संस्कृति नैतिक व्यवहारों का पालन करने केलिए सदा प्रेरित करती है। नैतिक मूल्य नैतिकता की उपज है, यह मानव की ही विशेषता है। नैतिक मूल्य ही एक व्यक्ति को सही मानव होने की प्राप्ति प्रदान करते हैं। अच्छा-बरा, सही-गलत के मानदण्ड को मूल्य कहलाते हैं और भारतीय परंपरा में इन मूल्यों को धर्म कहलाता है।

लेकिन दुखद बात यह है कि आज समाज और जीवन के हर एक क्षेत्र में नैतिक मूल्यों का पतन तेज़ी से हो रहा है। नैतिक मूल्यों के अभाव के कारण मानव के चरित्र में गिरावट आती जा रही है, आज अपराधों व हत्याओं की संख्या हर दिन बढ़ती जा रही है। चोरी, बलात्कार, हत्यायें आदि समस्याएँ इसलिए हो रही हैं कि व्यक्ति स्वयं अपने जीवन में नैतिक मूल्यों को स्थान न दे पा रहा है। नैतिक मूल्यों का क्षय एवं मनुष्य के चारित्रिक पतन व्यक्ति एवं समाज में साम्प्रदायिकता, जातीयता, हिंसा एवं सारी समस्याओं के हेतु बन जाते हैं।

हिन्दी की श्रेष्ठ महिला रचनाकार डॉ.सूर्यबाला ने अपनी रचनाओं द्वारा इस तरह के मूल्य शोषण का चित्र खींचने का प्रयास किया है।

बलात्कार एक कठिन सामाजिक और नैतिक अपराध है। बलात्कार का शिकार बननेवाली नारी जीवन पर्यन्त इस अपराध-बोध से निकल नहीं पाती। उसका सारा जीवन इसी मानसिक संघर्ष का शिकार रहता है, जो उसे सहज सामाजिक जीवन जीने में बाधा उत्पन्न करता है। उसका सारा व्यक्तित्व ही नष्ट हो जाता है। सूर्यबाला जी ने अपने उपन्यास 'सुबह के

बलात्कार की भीषण समस्या को प्रस्तुत उपन्यास की नायिका मानु कार होती है। इस घटना का गहरा वन पर पड़ती है। मानु का सारा ल जाता है। बलात्कार करनेवाला मनुष्य समाज में किसी बाधा के बिना घूम-फिर रहा है। यह समाज निर्दोषी लड़की को दोषी मानकर सदा घृणा भाव से देखता रहता है। यहाँ मानु ने समाज से लड़कर जीने की कोशिश की है और अंत तक अपने भाई केलिए ज़िन्दगी न्योछावर कर दी है।

वास्तव में बलात्कार जैसे क्रूर व्यवहार के प्रति समाज के सोच में बदलाव आना ज़रूरी है। बलात्कार की शिकार हुई लड़कियों को अपनाने केलिए समाज को आगे आना चाहिए। ऐसी लड़कियों के प्रति

हमारा दृष्टिकोण बदलना चाहिए। सूर्यबाला जी ने भी इसी बदलाव केलिए मानु के माध्यम से उद्घोषित किया है। संक्षेप में बलात्कार जैसी समस्या समाज केलिए एक भीषण कलंक या अभिशाप है। सूर्यबाला जी ने मानु के द्वारा इस समस्या को पाठक के सामने उठाया है।

भारतीय समाज में वैधव्य की स्थिति एक अभिशाप है। स्वयं सभ्य समझनेवाला समाज ऐसी स्त्रियों को किसी प्रकार का अधिकार नहीं देता। स्त्री के इस शापग्रस्त जीवन का करुण तथा मार्मिक चित्रण सूर्यबाला जी ने 'अग्निपंखी' नामक उपन्यास में किया है। प्रस्तुत उपन्यास में जीजी नामक एक विधवा नारी का चित्रण किया गया है। पति के निधन के बाद एक नारी को सहनी पड़ी यातनाओं, संघर्षों, परिवारवालों से मिले उपेक्षाकृत मनोभावों आदि का खुला चित्रण प्रस्तुत उपन्यास में लेखिका ने किया है।

इसी तरह सूर्यबाला जी ने अपने अन्य उपन्यास 'मेरे संधिपत्र' में अनमेल विवाह तथा लड़का-लड़की में भेद आदि विषयों को उल्लेखित किया है। 'दीक्षांत' नामक उपन्यास में भ्रष्टाचार, राजनीति के खोखलापन, गरीबी आदि समस्याओं को प्रस्तुत किया है। इन सभी प्रकार के मूल्य शोषणों के चित्रण में सूर्यबालाजी अत्यंत सफल दिखाई देती हैं।

उपन्यास के अलावा उनकी कहानियों में भी हमें नैतिक मूल्यों का गिराव देखा जाता है। 'सुमिन्तरा की बेटियाँ' नामक कहानी में पति के पर-स्त्री संबन्ध के कारण विवश हो गयी पत्नी सुमिन्तरा एवं उनकी दो स्वाभिमानी बेटियों की करुण कथा है। इसी तरह स्त्री-पुरुष संबंध की समस्या दिखानेवाली अन्य कहानियाँ है 'क्रॉसिंग' एवं 'क्या मालूम'।

वर्तमान युग में भ्रष्टाचार की समस्या ने व्यापक एवं विस्तृत रूप धारण किया है। व्यक्ति के स्वार्थ के साथ-साथ भ्रष्टाचार भी बढ़ रहा है। इस तरह भ्रष्टाचार की समस्या को उजागर करनेवाली सूर्यबाला जी की कहानियों में उल्लेखनीय हैं 'गीताचौधरी का आखिरी सवाल', 'होगी जय होगी जय है पुरुषोत्तम नवीन', 'मुक्तिपर्व आदि।

आधुनिक मानव बड़ा व्यस्त है। उसके पास समय की कमी है। वह सदा अपनी स्वार्थता का पालन केलिए, सिर्फ धन कमाने केलिए जीता है। धन के पीछे भागनेवाला स्वार्थी मानव अपने परिवार की उपेक्षा भी करता है। जिस परिवार में पति-पत्नी दोनों नौकरी करते हैं, ऐसे परिवार में माता- पिता अपेक्षा का पात्र बन जाते हैं, ऐसे उपेक्षित वर्गों में अधिकतर बड़े व्यक्ति ही दिखाई देते हैं। जवानी में स्त्री-पुरुष घर के प्रमुख होते हैं, किंतु वृद्धावस्ता में घर के कोने में पड़े रहते हैं। इसी तरह वृद्धजनों के प्रति नयी पीढ़ी के स्वार्थी या बुरे मनोभाव को चित्रित करनेवाली कहानियों में प्रमुख हैं 'दादी औररिमोट', 'जश्न', 'चिडियाँ जैसी माँ', 'बाऊजी और बन्दर' आदि।

आज का मनुष्य स्वार्थता का प्रतीक बन गया है। ऐसे स्वार्थी लोगों के कारण दूसरों को बहुत-सी कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। सूर्यबाला जी न ेऐसे मनुष्य के स्वार्थ को, उसकी भयानकता को सुंदर ढंग से अपनी कहानियों में उजागर किया है। उनकी 'मटियाला तीतर', 'विजेता', 'गीताचौधरी का आखिरी

सवाल', 'यामिनी कथा', 'सिर्फ मैं' आदि कहानियाँ इसके उदाहरण हैं।

नैतिक मूल्यों का विस्तार जीवन के सभी क्षेत्रों में होता है। व्यक्ति, परिवार, समाज एवं राष्ट्र से मानवता तक नैतिक मूल्यों का विकास होता है। नैतिकता सामाजिक जीवन को सुगम बनाती है। सामाजिक एकीकरण एवं अस्मिता की रक्षा नैतिकता के अभाव में नहीं हो सकती है। मानुषिकता, समत्व, प्रेम और त्याग जैसे नैतिक गुणों के अभाव में शांति, सहयोग, मैत्री आदि की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। सूयबाला जी नैतिक मूल्यों के गिराव का यह भीषण चेहरा अपने कथा साहित्य के माध्यम से पाठकों के सामने रखती हैं।

**सहायक ग्रन्थ**


1.सूर्यबाला के कथा साहित्य में युगबोध; वसंतकुमार गणपत माली; विकास प्रकाशन, कानपुर-2013

2. सूर्यबाला के कथा साहित्य का समाज शास्त्रीय अध्ययन; डॉ.रत्नमालाधारवाधुले; विकास प्रकाशन, कानपुर, 2014

3. नवनीत, अंक :फरवरी-2014 (सोनी वार्ष्णेय)



♦ शोधछात्रा

यूनिवार्सिटी कॉलेज,

तिरुवनंतपुरम, केरल राज्य ।

फोन: 9961490898


# श्रद्धांजलियाँ

## केदारनाथ सिहं(1934-2018)

बहुचर्चित जनकवि स्वर्गीय केदारनाथ सिंह का उत्तर प्रदेश के बलिया जिले के चकिया गाँव में 7 जुलाई 1934 को जन्म हुआ। बनारस हिंदू यूनिवर्सिटी से हिंदी में एम.ए (1956 में) तथा पी एच.डी (1964 में) की उपाधियाँ प्राप्त करके केदारनाथ सिंहजी पहले गोरखपुर में अध्यापक रहे। फिर जवहरलाल नेहरू यूनिवर्सिटी (दिल्ली) में भारतीय भाषा केन्द्र में नियुक्त हुए। वहाँ के प्रोप्रसर और विभागाध्यक्ष पद अलंकृत करके सेवानिवृत्त हुए ।

केदारनाथ जी के बहुचर्चित कविता संग्रह हैं - 'बाघ', 'अकाल में सारस' आदि । अन्य कविता संग्रह हैं - 'अभी बिल्कुल अभी', 'ज़मीन पक रही है', 'यहाँ से देखो', 'उत्तर कबीर' और 'साइकिल' आदि । 'मंच और मचान' लंबी कविता है । सन् 1989 में साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त कविता संग्रह है 'अकाल में सारस'। उन्हें व्यास सम्मान, मैथिलीशरणगुप्त पुरस्कार (मध्यप्रदेश), कुमारनाशान पुरस्कार (केरल), दिनकर पुरस्कार (बिहार), जीवन भारती पुरस्कार (उडीसा) आदि भी प्राप्त हुए। उन्होंने अपनी कविताओं में जन जीवन का सच्चा चित्रण किया । 'बनारस' कविता में शहर का चित्रणवाली चंद पंक्तियाँ देखिए-

इस शहर में घूल
धीरे-धीरे उड़ती है
धीरे-धीरे चलते हैं लोग ..... ।

अज्ञेय द्वारा संपादित 'तीसरा सप्तक' के कवि रहे। सन् 2013 में भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार पानेवाले हिंदी के 10 वें लेखक थे। हिंदी आलोचक और संपादक थे। 83 वर्ष की आयु में दिल्ली में उपचार के दौरान 19 मार्च 2018 को इस जनप्रिय कवि का निधन हुआ।

# समकालीन हिन्दी कविता और चन्द्रकांत देवताले

♦ डॉ.पी.लता

हिन्दी काव्य साहित्य में 1960 के बाद 'समकालीन कविता' की शुरुआत मानी जाती है। कथ्य की प्रासंगिकता एवं अनुभूत सत्य का चित्रण 'समकालीन कविता' की विशेषताएँ हैं। इसमें आम आदमी की पीड़ा, तथा शोषण के विरुद्ध आक्रोश और विद्रोह के स्वर मुखरित होते हैं। नये - नये प्रयोगों के कारण इसमें गद्यात्मकता है। फान्टसी के प्रयोग के द्वारा समकालीन सामाजिक स्थिति की भयावहता की अभिव्यक्ति होती है। बिम्बों, प्रतीकों के प्रयोग द्वारा समाज की विपन्नावस्था उजागर की जाती है। समकालीन कवि चन्द्रकांत देवताले की सही पहचान के बिना समकालीन हिन्दी कविता की ताकत की सही जानकारी नहीं हो पाएगी। स्वर्गीय कवि चन्द्रकांत देवताले की काव्य - रचनाओं का परिचय पाने के पहले उनके व्यक्तिगत जीवन का परिचय पाना समीचीन होगा। क्योंकि उनकी रचनाओं में उनका वैयक्तिक जीवनानुभव भी प्रतिबिंबित होता है।

डॉ. चन्द्रकांत देवताले का जन्म 7 नवंबर, 1936 को मध्यप्रदेश के बेतूल जिले के जोलखेड़ा नामक छोटे गाँव में एक मध्यवर्गीय परिवार में हुआ। उनके पिता श्री बेनीराम रेलवे स्टेशन पर गुड्स क्लार्क थे। मध्यवर्गीय परिवार के होने के कारण देवताले को आर्थिक कठिनाई झेलनी पड़ी। उनकी शादी सन् 1963 में सौकमल नामक लड़की से इन्दौर में संपन्न हुई। उनके दो संतानें हैं - कनु तथा अनु। अपने परिवार से उन्हें बड़ा लगाव था। घरेलू काम में वे अपने परिवार के सदस्यों की सहायता करते थे। अतिथियों का आदर - सत्कार करने में विशेष रुचि रखते थे तथा दोस्ती भी तहे दिल से निभाते थे। पहली जैसी आर्थिक बेचैनी उन्हें बाद में नहीं रही तथा वे सपरिवार उज्जैन में सुखपूर्ण जीवन बिताते थे। बड़ी बेटी कनु राजनीति - शास्त्र की प्रोफेसर हैं और अनु पेशेवर वायलिन वादक हैं। स्वयं मध्यवर्गीय परिवार में जन्म लेने के कारण मध्यवर्गीय मानसिकता तथा अनुभूत सत्य उनकी कविताओं में परिलक्षित होते हैं।

देवताले के परिवार के सदस्य उनकी कविताओं में कई जगह चित्रित हुए हैं। उनको अपनी माँ श्रीमती कांतिमती तथा पत्नी सौकमल इतनी परम प्रिय थीं कि इनके माध्यम से अपनी कविताओं में भारतीय नारी का रूप चित्रित किया है। अपनी पत्नी ही उनकी शक्ति थी। उनकी ये पंक्तियाँ देखिए -

> पपीते के पेड़ की तरह मेरी पत्नी
> मैं पिता हूँ दो चिड़ियाओं[1] का
> पपीते की गोद में बैठी हैं।[2]

सन् 1960 में देवताले की स्कूली शिक्षा इन्दौर में हुई तथा 1960 में होलकर कॉलेज, इन्दौर से प्रथम श्रेणी में एम.ए (हिन्दी) पास किया। उन्होंने 1984 में सागर विश्वविद्यालय से पी एच.डी की उपाधि प्राप्त की। शोध का विषय था 'मुक्तिबोध के चिन्तन और काव्य'।

सन् 1960 में एम.ए पास करने के बाद देवतालें ने 'नयी दुनिया', 'नया भारत' आदि अखबारों में काम किया। फिर वे अध्ययनवृत्ति पर आये। सन् 1962 में हमीदिया महाविद्यालय, भोपाल में अध्यापक के रूप में उनकी पहली नियुक्ति हुई। फिर उन्होंने मध्यप्रदेश के विभिन्न महाविद्यालयों में काम किया। सन् 1989 से दीर्घकाल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, स्तलाम में प्राध्यापक रहे। फिर उज्जैन में प्राध्यापक बने। सन् 1996 में अवकाश - प्राप्त होकर उज्जैन में रहते थे तथा स्वतंत्र लेखन - कार्य कर रहे थे। सन् 2003 में प्रसिद्ध काव्य - संकलन 'उजाड़ में संग्रहालय' प्रकाशित हुआ।

खिलता रंग, चमचमाता थोड़ा विस्तीर्ण ललाट, थोड़ी लंबी नाक, आँखों में चश्मा तथा अजब-सी बेचैनी, मुख मंड़ल पर सहज भोलापन - यही उनका बाह्य रूप था। अपने भोले व्यक्तित्व के कारण वे दूसरों से खुलकर बातें करते थे। उनका यह भोलाभाला व्यक्तित्व काव्य-रचनाओं में आक्रोश और विद्रोह में बदल जाता था।

देवताले को अपनी साहित्य - सेवा केलिए अनेक पुरस्कार व सम्मान प्राप्त हुए। सृजनात्मक लेखन केलिए उन्हें 'मुक्तिबोध फोलेशिप' प्राप्त हुआ। वे 'माखनलाल चतुर्वेदी कविता पुरस्कार' से सम्मानित हैं। 1986 - 87 में मध्यप्रदेश शासन का 'शिखर सम्मान' प्राप्त हुआ। 'वर्णमाला साहित्य संस्था, उड़ीसा' से सन् 1993 में 'सृजन भारती पुरस्कार' प्राप्त हुआ। 'मध्यप्रदेश साहित्य परिषद' के उपाध्यक्ष थे। नाशनल बुक ट्रस्ट, राजाराम मोहन राय लाइब्रेरी संस्थान, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, केन्द्र साहित्य अकादमी आदि के सदस्य रहे। सन् 1987 में भारतीय कवियों के प्रतिनिधि दल के साथ इटली में एक अंतर्राष्ट्रीय कविता समारोह[3] में भाग लिया। सन् 2002 में ज्ञानरंजन की 'पहल' पत्रिका के नाम पर प्रदत्त 'पहल सम्मान' प्राप्त हुआ। सन् 2004 में 'वसुधा' पत्रिका का 'भवभूति पुरस्कार' प्राप्त हुआ।

चन्द्रकांत देवताले जैसे साठोत्तर हिन्दी कवियों को कविता जनता के दुःख-दर्द को कारण बननेवाली सामाजिक विषमताओं को प्रकाश में लाने का तथा उनके विरुद्ध आक्रोश करने का एक औजार रही। देवताले उपेक्षितों, पीड़ितों, शोषितों एवं श्रमिकों के पक्षधर थे। मध्यवर्गीय जीवन की यातना उनकी कविता की केन्द्रीय संवेदना है। अर्थात् उनकी दृष्टि यथार्थपरक थी। उनकी कविताओं का मूल स्वर विद्रोह का है। सामाजिक समस्याओं के प्रति पैनी दृष्टि तथा भाषिक समृद्धि उनकी विद्रोही - व्यंग्यात्मक कविताओं को अद्वितीय बनाती हैं। काव्यों में प्रयुक्त व्यंग्यात्मक भाषा उनकी मौलिकता का द्योतक है। वे अपनी कविताओं में सामाजिकता बनाये रखते थे, साथ ही अपनी विशिष्टता भी सुरक्षित रखते थे। समस्याग्रस्त जन - जीवन को लिपिबद्ध करने में वे सफल हुए।

सन् 1952 में 16 वर्ष की आयु में रचित तथा सन् 1957 में 'ज्ञानोदय' पत्रिका में प्रकाशित 'सुबह' कविता चन्द्रकांत देवताले की सर्वप्रथम कविता है,

जिसका सृजन उन्होंने नर्मदा नदी के किनारे बड़वाह कस्बे में किया था। तब से वे काव्य - सृजन में लगे रहे। शुरू में उनकी कविताएँ 'ज्ञानोदय', 'धर्मयुग', 'आवेग', 'कल्पन', 'वयम्' आदि पत्रिकाओं में प्रकाशित होती थीं। सन् 1972 में श्री जगदीश चतुर्वेदी के संपादकत्व में निकली 'निषेध' पत्रिका में उनकी सात कविताएँ प्रकाशित हुई थीं।

कवि चन्द्रकांत देवताले के प्रकाशित कविता संकलन निम्न लिखित हैं-

हड्डियों में छिपा ज्वर(1973), दीवारों पर खून से (1975), लकड़बग्धा हँस रहा है (1980), रोशनी के मैदान की तरफ़ (1982), भूखंड़ तप रहा है (1982), आग हर चीड़ज़ में बतायी गयी थी (1987), बदला बेहद महँगा सौदा (1995), पत्थर की बैंच (1996), इतनी पत्थर रोशनी(2000), उजाड़ में संग्रहालय(2003), जहाँ थोड़ा सा सूर्योदय होगा(2008), यह ऐसा समय है, पत्थर फेंक रहा है(2011) आदि।

इन संकलनों में चालीस से लेकर सत्तर तक की कविताएँ संकलित हैं। 'इसनी पत्थर रोशनी' 63 कविताओं तथा 'उजाड़ में संग्रहालय' 70 कविताओं के संकलन हैं। सभी काव्य - रचनाओं में समालीन कविता की प्रवृत्तियाँ मिलती हैं। उनकी काव्यगत विशेषताओं का परिचय पाने केलिए 'दीवारों पर खून से' संग्रह की कुछ कविताओं कर ध्यान दें -

'दीवारों पर खून से' 41 कविताओं का संकलन है। इस संकलन की कविताएँ आम आदमी के प्रति नृशंस एवं बीभत्स अत्याचार के विरुद्ध खड़ी हैं। कवि खून से दीवार पर क्रांति की भाषा लिखना चाहते हैं। इस संकलन की 'चिथड़ा जवाब' कविता में निम्न वर्ग के पेट की समस्या चित्रित है। इसमें 'शहद बेचकर धूप में घूमनेवाला व्यक्ति जिसे राशन मिलने में भी दिक्कत है' निम्न वर्ग का प्रतीक है। 'कवितांत के अंधेरे में' कविता में राजनीतिक भ्रष्टाचार का चित्रण है। आम आदमी की बदनसीबी का चित्रण 'कब?' कविता में मिलता है। बदनसीबी के परिणामस्वरूप हज़ारों ढंग से आधुनिक मानव बेमौत मारा जाता है। भारत आज़ाद होकर भी भारत की आम जनता आज़ाद नहीं है - इस विड़म्बनापूर्ण स्थिति का चित्रण '28 वीं खिड़की का अग्निकांड़' कविता में हुआ है। यही 'मृत्यु' कविता का भी वर्ण्य विषय है। 'घर में अकेली औरत केलिए' कविता में अपनी पत्नी को संदेह की दृष्टि से देखनेवाला पति चित्रित हुआ है। 'अंत नहीं हो रहा है' कविता में अतीत से पूर्णतया न छूट जानेवाले तथा वर्तमान में पूर्णतया न रम जानेवाले आदमी की द्विग्धावस्था का चित्रण है। इन उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि 'दीवारों पर खून से' काव्य - संकलन की कविताओं में भारत की आम जनता के अशांत जीवन का चित्रण किया गया है।

'लकड़बग्घा हंस रहा है' काव्य - संग्रह की कविताएँ समाज में होनेवाले शोषण, अन्याय, दमन और प्रचलित राजनीति के कुत्सित चित्र उजागर करती हैं। इस संकलन की 'शाम को सड़क पर एक बच्चा' कविता में निम्नवर्गीय बच्चे की भूख का चित्रण है। भूखा - प्यासा, क्षीणित बच्चा सड़क पर गिर जाता है तो सन्तरी उसका कान उमेठकर उसे खड़ा कर देता है और एक ओर धक्का देता है। इस प्रकार धक्का खाना ही निम्न वर्ग की नियति है। 'मेरा एक सपना यह भी' कविता में कवि ने दिखाया है कि एक स्त्री सोयी है

थकान के कारण, न कि सुख की नींद-

नींद में हँसता देखना उसे
मेरा एक सपना यह भी
पर यह तो
माथे की सलवरें तक
नहीं मिटा पायी सोकर भी।

'इस पठार पर' कविता में कवि ने देह का धंधा करनेवाली औरतों के बारे में कहा है, जिनके पति ही उनकेलिए सड़क से ग्राहक लाते हैं। यह चित्र कवि ने इन 'शब्दों में खींचा है -

'अफीम के खेतों के इलाके में बाँछेड़
औरतें
अपने बोदे पतियों की मौजूदगी में
देह का धंधा करती हैं
और बीड़ी के लिए मचिस माँगने के
बहाने
मर्द धुन्धलके में डूबी सड़कों पर
अपनी औरतों केलिए
ग्राहक ढूँढते हैं।'

'लकड़बग्घा हँस रहा है' संग्रह की कविताओं में कवि ने औरतों पर अधिक विचार किया है। इस संग्रह की 'लकड़बग्घा हँस रहा है' कविता का कथानक यह है कि एक हत्यारा चार आदमियों की हत्या कर देता है तो इन चारों की पत्नियाँ विलाप करती हैं। इनके तेरह बच्चे हैं। पतियों की हत्या होने पर औरतें आक्रोश करती हैं, छाती फूटती हैं तथा चूड़ियाँ फोड़ती हैं। आखिर इन्हें एक माह मुफ़्त राशन दने की योजना की घोषणा होती है -

और देश भर के दूकान में
चारों राँड़ों को
बच्चों समेत
एक माह मुफ़्त राशन।

इस कविता में लकड़बग्घा[4] के प्रति पाठकों के मन में घृणा पैदा होता है, जो शोषण का प्रतीक है।

चन्द्रकांत देवताले द्वारा 'मुक्तिबोध फेलोशिप' के दौरान लिखी गयी रचना है 'भूखंड़ तप रहा है।' इस लंबी कविता के आठ खंड़ होते हैं और आठों खंड़ों को अलग - अलग नाम दिये गये हैं। त्रिभुवन नामक पात्र समूचे काव्य के केन्द्रबिन्दु में है। 'जेटयान' शीर्षक वाले भाग में त्रिभुवन कई बार पीछे मुड़कर देखता है। उसका इस प्रकार पीछे मुड़कर देखना अतीत की ओर देखना ही है। वह अपने अतीत में अपनी माँ को आटा पीसते देखता है, संघर्ष करते देखता है। दूर अतीत से वह अपने वर्तमान में आता है और वर्तमान की विभीषिका की चिन्ता करता है। उसके अतीत में कंप्यूटर नहीं था, लेकिन वर्तमान में कंप्यूटर है।

'अब तो मस्तिष्क है कंप्यूटर के पास भी
कविता लिख देगा कंप्यूटर एक दिन।'

त्रिभुवन सोचता है कि कंप्यूटर कविता लिख सकता है, लेकिन कभी उसके गर्भ में बच्चा जन्म नहीं ले सकता। कंप्यूटर के मस्तिष्क में भूख की पीड़ा भी नहीं है। किन्तु आज के मानव की अवस्था देखिए -

आज भी मकई के खेतों[5] के आसपास
फटी हुई आँखों की गुफ़ाएँ
एक दो की गिनती से गिन लो हड्डियाँ
कितनी ही
या फिर दो एक पहाड़े[6] से।

त्रिभुवन की आँखें दुनिया को घूर रही हैं, जहाँ सत्ता का रहस्यमय आतंक तथा न्याय का ढोंग चल रहे हैं -

'वे सब हमारे बच्चों के आज
और कल को भूनकर खा रहे हैं।'[7]

'भूखंड तप रहा है' में देवताले ने दिखाया है कि यह भूखंड़ सूरज की धूप से ज़्यादा सरकार की भ्रष्ट राजनीति तथा आम जनता की दीनावस्था से तप रहा है। यह काव्य -संग्रह आज के मानव की नियति का चित्र खींचता है। जब मैं ने देवतालेजी से पूछा कि 'इस कविता के त्रिभुवन आपके ही प्रतिरूप हैं?', तो उनका जवाब था 'आप चाहें तो ऐसा मान सकती हैं क्योंकि मेरे जीवन के बहुत अंश उसमें आ गये हैं।'[8]

बिम्बात्मकता तथा प्रतीकात्मकता समकालीन कविता की विशेषताएँ हैं। 'भूखंड़ तप रहा है' में प्रयुक्त अनेक बिम्ब आखिर एक बिम्ब में बदलकर सामाजिक त्रासदी की स्थिति उजागर करते हैं। उसमें 'भूखंड़' एक समूची वर्तमानकालीन व्यवस्था का बिम्ब है।

'वह उतरता जाता है सीढ़ियाँ
एक के बाद एक'
समय और जगह को लांघता वह।' -

इन पंक्तियों में 'सीढ़ी' प्रगति का प्रतीक है।

फान्टसी का प्रयोग देवताले की कविताओं में कई स्थानों में मिलता है। 'भूखंड़ तप रहा है' की कुछ पंक्तियाँ देखिए -

वह ढूँढता है कल्पांतरों के आकाश में
उड़ते हुए सुनहरे गुरुड़
और आ जाता है अपने आज में
जहाँ समय बेहद कातिल है।

इस संदर्भ में त्रिभुवन विराट ब्रह्मांड़ में मानव - विकास की कल्पना करता है। वह फान्टसी के माध्यम से सुदूर अतीत में जाता है और फिर अपने वर्तमान में लौट आता है।

स्पष्ट है कि स्वर्गीय श्री चन्द्रकांत देवताले की कविताओं में समकालीन समाज प्रतिबिंबित होता है। उनकी कविताओं में विद्रोह का स्वर मुखरित होता है। अनोखा - अनूठा व्यक्तित्व संपन्न श्रीचन्द्रकांत देवताले जैसे भोलेभाले व्यक्ति का समकालीन हिन्दी कविता में अनुपम तथा श्रेष्ठतम स्थान है। भारतीय जन मानस में अमिट प्रभाव छोड़ी काव्य पंक्तियों के प्रणेता स्वर्गीय चंद्रकांत देवताये हिन्दी साहित्य में अमर कवि ही रहेंगे।

## संदर्भ

1. चिड़ियों
2. 'दो लड़कियों का पिता होने से' कविता, 'लकड़बग्धा हँस रहा है' काव्य संकलन।
3. प्रेमिओ लित्तोसिरिओ मोंदेल्लो पालेमौ साहित्य समारोह।
4. एक जंगली हिंसक पशु, जो भेड़िये से कुछ बड़ा होता है।
5. 'मकई का खेत' भूख का प्रतीक है।
6. पहाड़ा
7. 'इस शाही हाड़ तोड़ती दिनचर्या में' खंड, 'भूखंड़ तप रहा है' कविता।
8. 21-1-2007 को देवताले से फोन पर बातचीत।

# श्रद्धांजलियाँ

## एम.सुकुमारन (1943-2018)

मलयालम के विख्यात कवि और कथाकार स्वर्गीय श्री एम.सुकुमारन का जन्म सन् 1943 में चिट्टूर (पालक्काटु जिला) में हुआ । नारायण मन्नाटियर पिता थे । मीनाक्षी अम्मा माता थीं । आठवीं कक्षा पास होने के बाद शक्कर मिल में काम किया, फिर स्कूल में अध्यापक बने । 'जनितकम्', 'पारा', 'अभिमुखं', 'शेष क्रिया', 'शुद्ध वायु' आदि उनके उपन्यास हैं । 'चरित्रगाथा', 'पितृ तर्पणम्', 'असुर संकीत्तनं', 'तूक्कुमरङ्ङळ ञङ्ङलक्कु' आदि कहानी संकलन हैं। कई पुरस्कार प्राप्त हुए, किन्तु पुरस्कार वितरण कार्यक्रम में वे खुद नहीं जाते थे । या तो संगाठकों के प्रतिनिधि उनके घर आकर पुरस्कार देते थे या उनकेलिए कोई व्यक्ति जाकर पुरस्कार स्वीकार करते थे ।

प्राप्त पुरस्कार हैं- 'मरिच्चिट्टिल्लात्तवस्टे स्मारकड़ङळ्' कहानी संकलन को केरल साहित्य आकादमी पुरस्कार (1976), 'जनितकम्' उपन्यास को केरल साहित्य अकादमी पुरस्कार (1997), समग्र साहित्यिक देन को केरल साहित्य अकादमी पुरस्कार (2004), 'चुवन्न चिह्नङ्ङळ' कहानी संकलन को केन्द्र साहित्य अकादमी पुरस्कार (2006), केरल सेकुलार कल्चरल फोरम द्वगरा प्रदत प्रथम मानवीयता पुरस्कार (2016)आदि । 'संघगानम', 'उणर्त्तुपाट्टु'- ये दोनों कथाएँ फीचर फिल्म बनीं । 'शेषक्रिया' और 'कष़कम' दोनों का फिल्मीकरण हुआ और क्रमशः सन् 1981 में तथा सन् 1995 में अच्छी कथा को दिया आनेवाला केरल सरकार का फिल्म अवार्ड प्राप्त हुआ । वे ऐसे लेखक थे, जिन्होंने कम्यूनिज़म को मनुष्य की समस्याओं का आदर्शात्मक हल माना। सन् 1963 में महालेखा कार्यालय में लिपिक के पद पर नियुक्त हुए। किन्तु ट्रेड यूनियन कार्यकलापों के कारण नौकरी नष्ट हुई । 75 वर्ष की आयु में हृदय सबंधी बीमारी से पीड़ित सुकुमारन जी एस.सी.टी.ऐ.एम.एस.टी अस्पताल में भरती हुए । उनकी पत्नी है मीनाक्षी और बेटी है रमणी । 14 मार्च 2018 को निस्वार्थ मलयालम साहित्य सेवी श्री एम.सुकुमारन का स्वर्गवास हुआ ।

## श्रीदेवी (1963-2018)

विविध भाषाओं में प्रभावी अभिनय के ज़रिए भारतीयों की प्रिय अभिनेत्री बनी श्रीदेवी के 25 फरवरी 2018 को आकस्मिक निधन ने उनके आराधकों को दुखसागर में डुबो दिया ।

श्रीदेवी का जन्म तमिलनाटु के शिवकाशी नामक स्थान में 13 अगस्त 1963 को हुआ । पिता अय्यप्पन तमिलनाटु के थे, वकील थे । माता राजेश्वरी आन्ध्रप्रदेश की थीं । देखने में अतिसुन्दर श्रीदेवी का अभिनय जीवन चार साल की आयु में 1967 में 'कुमार संभवम' सिनेमा (तमिल) में बाल सुब्रह्मण्य के वेश में अभिनय के साथ शुरू हुआ। सन् 1970 में 'मा नन्न निर्दोषी' में बाल नटी के वेश में तेलुगु सिनेमा में प्रवेश पाया । सन् 1971 में 'पूम्पाट्टा' नामक मलयालम सिनेमा के अभिनय को राज्य स्तरीय फिल्म पुरस्कार प्राप्त हुआ । मलयालम में नायिका वेश में उनका पहला सिनेमा है, 'वेष़ाम्पल' । इसमें नायक विन्सेंट के साथ अभिनय करते वक्त केवल बारह साल की थीं । सन् 1975 में 'जूली' (हिंदी) सिनेमा के साथ बोलीवुड़ में प्रवेश किया। सन् 1976 में 'मुंटु मुटिच्ची' तमिल सिनेमा में नायिका वेश में आयीं । अभिनय जीवन का पचासवाँ वर्ष 'मों' सिनेमा के साथ पूरा हुआ । कुल 300 फिल्मों में अभिनय किया । हिन्दी तथा दक्षिण भारतीय भाषाओं के प्रायः सभी प्रमुख अभिनेताओं के साथ अभिनय किया ।

सन् 1996 में बोणी कपूर (सिनेमा निदेशक) के साथ शादी संपन्न हुई और सन् 1997 में बड़ी बेटी जानवी का जन्म हुआ। बेटी की देखभाल केलिए एक लंबे अंतराल

में अभिनय जीवन से अलविदा कहा। इस दौरान छोटी बेटी खुशी का भी जन्म हुआ । सिनेमा से अलग रहते काल में अपनी बेटियों की खुशी में खुद सुख पाया।

बड़ी बेटी जानवी का पहला फिल्म जुलाई में रिलीज़ होनेवाला है। इस फिल्म में जानवी नायिका है । 18 साल के अंतराल के बाद सन् 2012 में श्रीदेवी 'इंग्लिश विंग्लिशें' सिनेमा में नायिका बनी। 'मों' सिनेमा (2017) में माँ के वेश में श्रीदेवी का अभिनय बड़ा प्रभावी रहा। श्रीदेवी के अभिनय जीवन के पचासवें वर्ष सन् 2017 में उपहार स्वरूप पति बोणी कपूर ने 'मों' सिनेमा का निर्माण किया। 'ज़ीरो' अभिनेत्री श्रीदेवी का अंतिम चलचित्र है, जो शीघ्र ही निकलने की प्रतीक्षा है। 'मून्नांपिरै'(तमिल) में मानसिक कमज़ोरीवाली लड़की की भूमिका में आनेवाली श्रीदेवी को सुलाने केलिए कमलहासन के कथापात्र द्वारा गाया जानेवाला प्रसिद्ध (रचना-कण्णदासन) गान है -'कण्णे कलमाने कण्णि मयिलिने कण्टेन उनै नाने'।

श्रीदेवीअपने पति की बहन रीना के बेटे मोहित मरवा (बोलिवुड अभिनेता) की शादी में भाग लेने यू.ए.ई में पति तथा छोटी बेटी के साथ गयी थी । दुबाई एमिरेटस टवर हॉटल में 25 फरवरी 2018 रात को अबोधावस्था में बनी श्रीदेवी का अस्पताल पहुँचाने के पहले ही निधन हुआ । 54 साल की थीं ।

## गीतानंदन

ओट्टन तुल्लल के आचार्य और केरल कलामंडलम् के तुल्लल विभाग के पूर्व अध्यक्ष गीतानंदन मंच पर तुल्लल खेलते वक्त परलोक सिधारे । यों तुल्लल खेलते वक्त प्राण त्याग करने की उनकी इच्छापूर्ति हुई । वे 28 जनवरी 2018 को अविट्टत्तूर महादेव मंदिर में 'कल्याण सौगन्धिकं' तुल्लल खेल रहे थे। रात को सात बजे खेल शुरू हुआ था। खेल में हनुमान कदलीवनं में प्रवेश करने का संदर्भ था। खेल शुरू होके दस मिनट भी नहीं हुआ कि वे नीचे गिरे और पहले दर्शकों ने सोचा कि वे खेल के दरमियान घुटने के बल ख़डे हुए हैं । वास्तविकता का पता चला तो अविलंब ही उन्हें पुल्लूर मिशन अस्पताल में पहुँचाया, किन्तु उनका निधन हुआ था। वे पहले ही हृदय की बीमारी से पीड़ित थे। तुल्लल उनकी ज़िंदगी का इतना अभिन्न अंग बना था कि आंजियोप्लास्ट करने के बाद भी वे तुल्लल खेलते थे ।

वे फिल्म (मलयालम) अभिनेता भी थे। उनकी पत्नी शोभा नर्तकी है और सिनेमा में नृत्य निर्देशन का कार्य करती है । दोनों संतानें (सनल कुमार और श्रीलक्ष्मी) पिता के अनुगामी हैं और विदेश में तुल्लल कला केन्द्र चलाते हैं।

स्वर्गीय गीतानंदन के पिता पष़कत्तु केशवन नंपूतिरि भी तुल्लल के आचार्य थे। माता हैं सावित्री ब्राह्मणी अम्मा। गीतानंदन केरल कलामंडलम में सन् 1974 में छात्र बने और वहाँ दस साल की पढ़ाई के बाद वहीं अध्यापक बने। तुल्लल साहित्य के प्रणेता मलयालम कवि कुंचन नंपियार के वेश में उन्होंने एक टोलीफिल्म में अभिनय किया। अध्यापन जीवन के पच्चीसवें वर्ष में शिष्यों ने 'निला सौगंधिकम्' नाम से वीर श्रृंखला देकर उन्हें सम्मानित किया। वे 'पद्म पुरस्कार' केलिए भी नामांकित हुए थे। 'केरल संगीत नाटक अकादमी' तथा 'केरल कला मंडलम्' ने पुरस्कार देकर उन्हें सम्मानित किया। 'तुल्लल कलानिधि पुरस्कार' भी प्राप्त हुआ। देश-विदेशों में उन्होंने पाँच हज़ार से अधिक मंचों में तुल्लल खेला। पालक्काटु के पेरिङ्ङाटि गाँव के निवासी थे ।

मुद्रक तथा प्रकाशक डॉ.पी.लता, आरती, टी.सी. 14/1592, फोरस्ट ऑफिस लेन, वषुतक्काटु, तिरुवनन्तपुरम -14 द्वारा अबी प्रकाशन एन्ड प्री-प्रेस, करुमम्, तिरुवनन्तपुरम -2 में मुद्रित तथा डॉ.पी.लता द्वारा संपादित
Printed & Published by Dr.P.Letha, Arathi, T.C. 14/1592, Forest Office Lane, Vazhuthacaud, Thiruvananthapuram -14,
Printed at Abi Design & Pre-Press, Karumom, Thiruvananthapuram -2 & Edited by Dr. P. Letha